ओ३म्

छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा
हिन्दी मासिक मुख पत्र
मास–बैसाख–ज्येष्ठ, संवत् 2073
मई 2016

अंक 129, मूल्य 10

अग्निदूत

अग्निं दूतं वृणीमहे. (ऋग्वेद)

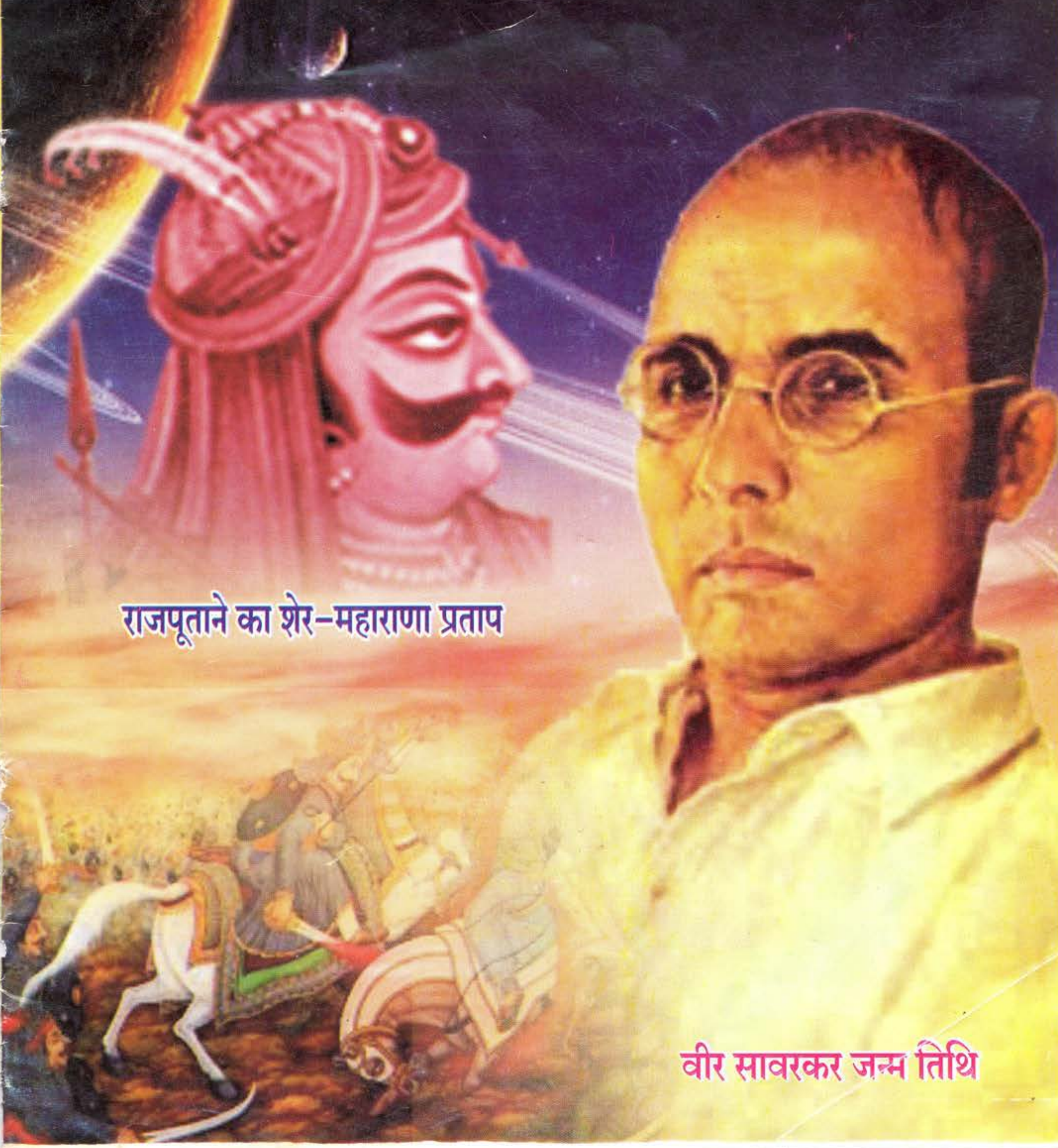

राजपूताने का शेर–महाराणा प्रताप

वीर सावरकर जन्म तिथि

महर्षि दयानन्द एवं सत्यार्थ प्रकाश

जिसने बदली दिशा जगत की धरती और आकाश की ।
जय बोलो उस दयाननद की जय सत्यार्थ प्रकाश की ॥

केरल से कश्मीर तलक जब घोर अँधेरा छाया था ।
रूढ़ि अन्ध विश्वास अविद्या ने भ्रमजाल बिछाया था ॥
जकड़ा हुआ स्वदेश दासता में व्याकुल घबराया था ।
मतवादों ने बीज द्वेष का भारत में बिखराया था ॥
कहींन पड़ती थी दिखलायी ज्योति दूर या पास की ।
ध्वनि कराहती सी लगती थी मानव के हर श्वांस की ॥१॥

जाति पांति मजहब के झगड़े निशदिन होते रहते थे ।
विपदा के आँसू भारत माँ की आँखों से बहते थे ॥
मातृशक्ति और शूद्र उपेक्षा के शिकार बन रहते थे ।
शोषण अत्याचार और अन्याय सभी जन सहते थे ॥
रोता अम्बर रोती धरती लीला देख विनाश की ।
कहीं न कोई किरण दिखायी पड़ती थी कुछ आश की ॥२॥

तभी प्रान्त गुजरात मध्य टंकारा नामक ग्राम में ।
तिमिर भेदती हुयी अवतरित किरन एक निज धाम में ॥
बिखरा था प्रकाश जिसका हर एक नगर या ग्राम में ।
कीर्ति पताका जिसकी फहरायी थी चारोधाम में ॥
दिव्य ज्योति प्रगटी थी जिसके उज्ज्वल धवल प्रकास की ।
किरनें फूटीं मानवता के मन में फिर कुछ आश की ॥३॥

उसी किरण को सभी जानते दयानन्द के नाम से ।
मानवता का मान बढ़ाया था जिसने निज काम से ॥
कर्मवारी वह रहा न उसका नाता था विश्राम से ।
उसने तो सम्बन्ध बनाया सत्य और शिवधाम से ॥
आशा बन कर आया था वह दुःखिया दीन निराश की ।
ज्योति जगा दी जिसने जन जन के मन में विश्वास की ॥४॥

उसके द्वारा रचित ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश महान है ।
जिसमें भरा हुआ वेदों का ज्ञान और विज्ञान है ॥
मानव को सम्पूर्ण मनुज बनने का जहाँ विधान है ।
मानवता के सब रोगों का जिसमें भरा निदान है ॥
अक्षर अक्षर ज्ञान ज्योति सी जिसके सत्य प्रकाश की ।
जिसने पूर्ति किया मानवता के मन की हर आश की ॥ ५ ॥

मानव से मानव की दूरी जिसमें गयी मिटायी है ।
भेदभाव की दीवारें सब जिसमें गयी गिरायी हैं ॥
छुआछूत का भूत भगाने की विधि गयी बतायी है ।
जाति तोड़ कर वर्ण व्यवस्था फिर से गयी बनायी है ॥
हीन भावना मिटी हृदय से स्वामी सेवक दास की ।
उपजा नवल प्रकाश मिली निधि ईश्वर के विश्वास की ॥६॥

पाखण्डों के गढ़ को तोड़ा रूढ़िवाद का नाश किया ।
सत्यधर्म की परिभाषा हित था सत्यार्थ प्रकाश दिया ॥
व्यक्तिवाद अवतारवाद गुरुडम का पूर्ण विनाश किया ।
वेद विहित चिर प्रगति पंथ का समुचित सतत् विकास किया ॥
वह सत्यार्थ प्रकाश की जिसने गति बदली इतिहास की ।
स्वतंत्रता का रखवाला वह सभी आम या खास की ॥७॥

युग परिवर्तन यदि लाना है तो सत्यार्थ प्रकाश पढ़ो ।
और सफलता की मंजिल पर निर्भय होकर नित्य चढ़ो ॥
समता शान्ति प्रगति के पथ पर निर्भय होकर नित्य बढ़ो ।
धर्म अर्थ और काम के मोक्ष के सोपानों पर अभय चढ़ो ॥
पूर्त्ति बन गया अमर ग्रंथ यह मानव के हर आश की ।
"साथी" अमर कहानी है यह इस युग के इतिहास की ॥८॥

जिसने बदली दिशा जगत की धरती और आकाश की ।
जय बोलो ऋषिदयानन्द की जय सत्यार्थ प्रकाश की ॥

रचनाकार : परमात्मा प्रसाद शुक्ल 'साथी' पवन विहार कालोनी, न्यू राजेन्द्र नगर, रायपुर

अग्निदूत

हिन्दी मासिक

राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक विचारों की मासिक पत्रिका

वर्ष - ११, अंक ११ — ओ३म् — मास/सन् - मई - २०१६

श्रुतिप्रणीत-सिद्धधर्मवह्निरूपतत्त्वकं,
महर्षिचित्त-दीप्त वेद-सारभूतनिश्चयं।
तदग्निसंज्ञकस्य दौत्यमेत्य सभ्रसभ्रकम्,
सभाग्निदूत-पत्रिकेयमादधातु मानसे।।

विक्रमी संवत् - २०७३
सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,११८
दयानन्दाब्द - १९३

: प्रधान सम्पादक :
आचार्य अंशुदेव आर्य
प्रधान सभा
(मो. ०७०४९२४४२२४)

★

: प्रबंध सम्पादक :
आर्य दीनानाथ वर्मा
मंत्री सभा
(मो. ९८२६३६३५७८)

★

: सहप्रबंध सम्पादक :
श्री जोगीराम आर्य
कोषाध्यक्ष सभा
(मो. 9977152119)

★

: व्यवस्थापक :
श्री दिलीप आर्य
उपमंत्री (कार्यालय) सभा
मो. ९६३०८०१२५७

★

: सम्पादक :
आचार्य कर्मवीर
मो. ९७५२३८८२६७

पेज सज्जक : श्रीनारायण कौशिक
व. प्रबधंक : श्री रामेश्वर प्रसाद यादव

- कार्यालय पता -
छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा
दयानन्द परिसर, आर्य नगर, दुर्ग (छ.ग.) ४९१ ००१
फोन : (०७८८) ४०३०९७२
फैक्स नं. : ०७८८-४०११३४२;
e-mail : chhattisgarhsabha@gmail.com

वार्षिक शुल्क - १०० /- दसवर्षीय - ८०० /-

विषय - सूची

पृष्ठ क्र.

१.	वेदामृत : सौन्दर्य की याचना	स्व. डॉ. रामनाथ वेदालङ्कार	०४
२.	सम्पादकीय : "मानवता" वर्तमान समाज की सबसे बड़ी मांग	आचार्य कर्मवीर	०५
३.	बाल विवाह : वैदिक संस्कृति के प्रतिकूल	डॉ. उमाशंकर नगायच	०८
४.	वेद क्या और क्यों ?	स्वामी सुधानन्द सरस्वती	११
५.	ऋषिवर देवदयानन्द की राष्ट्र को देन	खुशहालचन्द्र आर्य	१४
६.	द्रौपदी के पति युधिष्ठिर हैं	महात्मा चैतन्यमुनि	१७
७.	संसार की समस्याओं का कारण मत-मतान्तर की अविद्याजन्य मान्यताएँ	मनमोहन कुमार आर्य	२१
८.	आओ संसार को श्रेष्ठ बनाएँ	डॉ. बिजेन्द्र पाल सिंह	२४
९.	घटनाएँ जिन्होंने मुंशीराम को विचलित किया	कु. आभा शर्मा	२५
१०.	शतपथ ब्राह्मण में अग्निहोत्र का विवेचन	डॉ. भवानीलाल भारतीय	२७
११.	क्रान्तिकारी सावरकर बन्धु	आचार्य सत्यानन्द नैष्ठिक	२९
१४.	होमियोपैथी से पथरी का सफल इलाज	डॉ. विद्याकान्त त्रिवेदी	३१
१२.	समाचार दर्पण		३२

सूचना : छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा का अणुसंकेत
(ई-मेल) E-mail : chhattisgarhsabha@gmail.com
(सम्पादक) E-mail : shastrikv1975@gmail.com

सूचना : हमारा नया वेब साइट देखें
Website : http:/www.cgaryapratinidhisabha.com

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है।

सम्पादक प्रकाशक मुद्रक - आचार्य अंशुदेव आर्य द्वारा छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग के वैदिक मुद्रणालय से छपवाकर प्रकाशित किया गया।

वेद
वेदामृत

सौन्दर्य की याचना

भाष्यकार - स्व. डॉ० रामनाथ वेदालङ्कार

वाममद्य सवितर् वाममु श्वो, दिवे-दिवे वाममस्मभ्यं सावीः।
वामस्य हि क्षयस्य देव भूरेः, अया धिया वामभाजः स्याम॥ ऋग्. ६.७१.६

ऋषिः **भरद्वाजः बार्हस्पत्यः**। देवता **सविता**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● **(सवितः)** हे सर्जक और प्रेरक परमेश्वर! **(अद्य)** आज **(वामं)** सौन्दर्य को (उ) और **(श्वः)** कल **(वामं)** सौन्दर्य को, (और) **(दिवे-दिवे)** प्रतिदिन **(वामं)** सौन्दर्य को **(अस्मभ्यं)** हमारे लिए **(सावीः)** प्रेरित कर, प्रदान कर। **(देव)** हे देव! हे दानादिगुणविशिष्ट! (तू) **(भूरेः)** प्रचूर **(वामस्य)** सुन्दर **(क्षयस्य)** निधि का (दाता है) **(अया)** इस **(धिया)** प्रज्ञा और कर्म से (हम) **(वामभाजः)** सौन्दर्य-सेवी **(स्याम)** हों।

हे सविता देव! हे परमात्मन्! तुम समस्त गुणों के सर्जक भी हो और सत्पात्रों में उन गुणों को प्रेरित करने वाले भी हो। बड़े-से-बड़े साधक भक्त सद्गुणों की प्राप्ति के लिए तुमसे ही याचना करते हैं। आज हम भी तुमसे एक गुण की कामना कर रहे हैं। हम 'वाम' अर्थात् सौन्दर्य को पाना चाहते हैं, सौन्दर्य के उपासक बनना चाहते हैं। कोषकारों ने 'वाम' के प्रशस्त, सेवनीय और सुन्दर अर्थ किये हैं। जो वस्तु प्रशस्त और सेवनीय होती है, वस्तुतः वही सुन्दर कहलाने योग्य है। कोई वस्तु रुप-रंग से सुन्दर भी हो, किन्तु हानिकारक होने से अप्रशस्त एवं असेवनीय हो, तो वह सुन्दर नहीं कहाती। परिणामतः 'सुन्दर' वही है, जो 'सत्य' और 'शिव' भी हो। अतः हे प्रभु! जब हम तुमसे सौन्दर्य की याचना कर रहे हैं, तब उसमें 'सत्यम्' और 'शिवम्' भी सम्मिलित है। हे सवितः! हमें तुम आज सौन्दर्य प्रदान करो, कल भी सौन्दर्य प्रदान करना, प्रतिदिन सौन्दर्य प्रदान करते रहना। तुम 'देव' हो, दानादि-गुणयुक्त होने से स्वंय सुन्दर हो, अतएव प्रचुर सुन्दर सद्गुणों की निधि के दाता भी हो। तुम हमें सद्गुणों की सुन्दर निधि प्रदान करो। ऐसी कृपा करो कि हम सदा ही प्रज्ञा और कर्म दोनों से सौन्दर्य-सेवी बने रहें। मन से सौन्दर्य के ही विषय में सोंचे, बुद्धि से सौन्दर्य को ही पाने का निश्चय करें और कर्म से सौन्दर्य को ही पाने के लिये प्रवृत्त हों। साथ ही मन, बुद्धि और कर्म तीनों को सुन्दर बनायें। 'वाम' का अर्थ विपरीत भी होता है। कभी-कभी हमें सौन्दर्य को पाने के लिए असुन्दर के प्रति मन में विपरीत-भावना भी करनी आवश्यक होती है, जिसे योगदर्शनकार ने 'प्रतिपक्ष-भावना' कहा है। जब हिंसा, असत्य, स्तेय, अब्रह्मचर्य आदि असुन्दर वस्तुएँ लुभावना रुप दिखाकर मन पर आक्रमण करें, तब साधक इनमें दोष-दर्शन करके अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य आदि सुन्दर वस्तुओं को सहज ही प्राप्त कर सकता है। हे भगवन्! तुम सौन्दर्य के स्रष्टा और प्रेरक हो, हमें सर्वांग-सुन्दर बना दो।

संस्कृतार्थः- १. यः सूते उत्पादयति, सुवति प्रेरयति वा स सविता (षूङ्प्राणिगर्भविपोचने, षू प्रेरणे)। २. क्षि निवासगत्योः। ३. अया अनया (निरु. ३.२१)। ४. वाम=प्रशस्य (निघं ३.८), संभजनीय (निरु. ६.२२), सुन्दर (अमर ३.३.१४५).

सम्पादकीय

"मानवता" वर्तमान समाज की सबसे बड़ी मांग

विद्या और विज्ञान के अप्रतिम विकास तथा उस से प्राप्त आविष्कारों के कारण आज मानव-जीवन के प्रत्येक पक्ष में बहुविध परिवर्तन आ रहे हैं। अतएव एक दशाब्दी में ही जीवन-व्यवहार की हर वस्तु में एक अद्भुत रुपान्तर हो गया है। अनेकविध आविष्कारों और विशेषतः यातायात तथा सन्देश-प्रसार की सुविधाओं के कारण मानव-समाज अनेक प्रकार से परस्पर बहुत निकट आ गया है। इन आविष्कारों ने सारे संसार को एकरुपता दे दी है। जिसके परिणामस्वरुप अब हम जात-पात या छुआछूत (स्पृश्यास्पृश्य) की पुरानी भेदमयी भावना के आधार पर छोटे-छोटे रुपों में बँट कर नहीं जी सकते। आज हमारी दुनियां बहुत विशाल हो गई है। अपने जीवन की मौलिक, सहायक और सुविधाजनक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक व्यक्ति की तो बात ही क्या, प्रत्येक देश अन्य देशों पर आश्रित है। कोई भी दूसरों से कट कर या अलग रहकर प्रगति तो क्या, एक क्षण जी भी नहीं सकता। अतः आज की परिस्थितियों में जीवन की प्रगति के लिए मानव-जाति, मानव-धर्म, मानव-संस्कृति और मानव-सभ्यता का विकास करना एकमात्र उपाय है।

आज के जीवन की यह मांग है कि हमारे पारस्परिक व्यवहार का मूल-आधार मानव जाति ही हो, न कि जन्म, धर्म, धन, भाषा, प्रदेश-गत वर्ग या जातियाँ। क्योंकि विद्या और विज्ञान के विकास ने यह सिद्ध कर दिया है कि मानव की यदि कोई जाति है, तो वह मानव-जाति ही है, न कि कोई अन्य (जैसे जन्म के आधार से ब्राह्मणादि जातियां या धर्म-चिह्नों के भेद से हिन्दू, सिख, ईसाई आदि जातियाँ)। सभी मानवों के शरीर एवं शरीरों के अंग-इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, हृदय आदि एक समान है। प्रदेश और मौसम के अन्तर से परस्पर बहुत सामान्य सा ही अन्तर होता है। केवल शरीर की बाह्य स्थिति ही नहीं, अपितु आन्तरिक स्थिति (अन्तःकरण) में भी एक समान ही जिजीविषा, जान-माल की सुरक्षा की अभिलाषा, जिज्ञासा, सम्मान, सुख-प्राप्ति, प्रगति, सहयोग, सद्भाव ही अभिलाषा आदि भावनाएँ उद्भव होती है। उनमें शिक्षा एवं संस्कार के भेदवशात् केवल स्थूल-सूक्ष्म का ही भेद होता है।

जाति शब्द का[illegible]योग प्रायः जन्मतः प्राप्त होता होने वाली समान आकृतिक के आधार पर किया जाता है। [illegible]निक परम्परा के अनुसार (नित्यत्वे सति अनेकसमवेतत्वम् जातित्वम्-न्यायसिद्धान्त[illegible]तावली) अनेकों में जो समानता है, वह जाति है। पर वह नित्य और समवाय-सम्बन्ध वा[illegible]नी चाहिए। जैसी सभी गौओं में समानता के कारण गोजाति एवं सभी अश्वों में [illegible]कृति, स्वभाव के कारण अश्वजाति का प्रयोग होता है। अतएव यहां जाति शब्द को सा[illegible] नाम से स्मरण किया गया है। न्याय दर्शन के निर्माता महर्षि गौतम ने इसी का और सूक्ष्मता से विचार करते हुए कहा है - समान प्रसवात्मिका जाति (न्याय. २,२,६८) अर्थात् जिन के प्रसव (ज़न्म) की प्रक्रिया समान है या जो अपने समान को जन्म दे सकते हैं, उनके लिए जाति शब्द का प्रयोग होता है। अतः शरीर-विज्ञान तथा जीवशास्त्र की दृष्टि से सभी मनुष्यों में शरीर की बाह्य-आन्तरिक समानता हीनहीं, अपितु वंश-बुद्धि की भी समानता और क्षमता भी है। वैशेषिक की दृष्टि से स्त्री-पुरुष में नगण्य भेद जहां सामने आता है, वहां न्याय सूत्र की प्रदर्शित प्रक्रिया से जनन की समानता का ही नहीं, अपितु पारस्परिक आपूरकता का भी परिचय प्राप्त होता है। अतः पारस्परिक व्यवहार में जन्म, धर्म, प्रदेश से सम्बद्ध कल्पित जाति को आधार नहीं बनाना चाहिए। इससे अपनों के प्रति भेद-भाव, पक्षपात, मोह एवं अभिमान की भावना पनपती है, जो कि स्वार्थ, लोभ, अन्याय को क्रमशः जन्म देती है। दूसरी ओर कल्पित भेद-भाव के कारण दूसरापन आने से घृणा, अलगाव, ईर्ष्या, द्वेष-वशात् अन्याय, शोषण को समर्थन मिलता है तथा कुछ में आत्महीनता की भावना आने से परस्पर सहयोग, सद्भाव,सम्मान की प्राप्ति में बाधा आती है। इसलिए आज की परिस्थितियों में विद्या और विज्ञान की यह मांग है कि प्रत्येक मानव मानवता के आधार पर व्यवहार करे, वर्गगत भावनाओं को पारस्परिक व्यवहार का आधार न बनाये। तभी तो किसी के चेहरे से कल्पित जाति का बोध नहीं होता।

धर्म शब्द का अर्थ है - धारण व पालन करने का तत्व। जिसका अभिप्राय है कि जिन बातों, विचारों, व्यवहारों के पालन से व्यक्ति का वैयक्तिक और सामाजिक जीवन सुखी हो, वे धर्म है। इसीलिए ही सभी स्मृतिकारों ने सत्य, स्नेह, दया, परोपकार, ईमानदारी, धैर्य आदि जीवन की व्यवस्थाओं को व्यवस्थित करने वाले तत्वों को धर्म के लक्षण के रुप में दर्शाया है। सत्य स्नेह, ईमानदारी आदि के वर्तने से जब कोई व्यवहार सफल होता है, तभी उससे सुख मिलता है। इसीलिए ही सभी शास्त्रकारों एवं धर्मावलम्बियों ने धर्म का फल सुख माना है तथा धर्म से प्राप्त स्वर्ग की कल्पना सुख-रुप में की है। सुख फल वाला होने से ही धर्म को पुण्य भी कहते हैं।

धर्म शब्द से कर्मकाण्ड, दर्शन, मान्यता, विश्वास और आचार का ग्रहण होता है या धर्म के ये भेद हैं। पर इनमें आचार-पक्ष ही मुख्य है। आचारः परमोधर्मः मनु. १.१०८। अन्य कर्मकाण्ड आदि भेद आचारवान् बनने के लिए प्रेरणस्वरुप में है। भौतिक क्षेत्र में धर्म का अर्थ स्वभाव है, जैसे कि अग्नि का धर्म प्रकाश व उष्णता देता है। पुनर्जन्म की दृष्टि से धर्म का अर्थ अपूर्व=पूर्वकृत

कर्मों के संस्कार है, जो अपने जन्म के कारण बनते हैं। माता-पिता का धर्म है कि सन्तान का उचित पालन करें, यहां धर्म शब्द कर्त्तव्य का बोधक है, तथा यह राजधर्म है कि अपराधी को उचित दण्ड दिया जाए, यहां धर्म शब्द न्याय, कर्त्तव्य का वाचक है जो आचार-पक्ष का ही अंग है।

अतः व्यवस्था के माध्यम से सुख देने वाले धर्म का निर्णय हमें मानव-कल्याण की दृष्टि से ही करना चाहिए। जिससे मानव-जाति का कल्याण हो और परस्पर सहयोग, सद्भाव, सम्मान बढ़े, उसको ही धर्म मानना और उसका ही धर्म के रुप में व्यवहार होना चाहिए, न कि केवल वर्गविशेष के लिए ही स्वर्ग आदि फल की प्राप्ति जैसे भेदभाव को बढ़ाने वाले और अपने धर्म में विश्वास न रखने वालों को काफिर, म्लेच्छ आदि नामों से सम्बोधित करके घृणा, ईर्ष्या, द्वेष की भावनाओं को फैलाने वाले विधि-विधान को धर्म कहा जा सकता है। इस सारे का सार यह है कि धर्म के निर्णय का केन्द्र बिन्दु मानव-कल्याण ही होना चाहिए। संस्कृति शब्द सम् उपसर्गपूर्वक कृ धातु से बनता है, जिसका अर्थ है दुर्गुण, मैल, बुराई को हटाकर किसी में सद्गुण, स्वच्छता, सुन्दरता, अच्छाई स्थापित करना।

अतः संस्कृति का अभिप्राय है व्यक्ति के पशुपन (स्वार्थ, निर्बल को सताना, सबल से डरना) को हटाकर उसे अच्छा मनुष्य बनाना। ऐसे प्रयास की प्रक्रिया, पद्धति को ही संस्कृति कहते हैं। जैसे कृषि-विज्ञान में परीक्षित मिट्टी वाले खेत को तैयार कर यथासमय उसमें संस्कृत बीज बोया जाता है तथा खाद, सिंचाई, संभाल द्वारा अच्छी फसल प्राप्ति की जाती है। अतएव संस्कृति के लिए कल्चर शब्द का प्रयोग होती है, जो कि एग्रीकल्चर शब्द द्वारा कृषि-विज्ञान की प्रक्रिया से अच्छी फसल प्राप्ति जैसी पद्धति का ही स्मरण कराता है।

अतः संस्कृति शब्द का भाव अच्छे मानव वाले की प्रक्रिया ही है, न कि प्रदेश, वर्ग की पुरानी वेश-भूषा, रीति-रिवाज जैसी तात्कालिक चीजें, जो कि आज की परिवर्तनशील परिस्थितियों और एकरुपता के कारण बहुत कुछ अनुपयोगी, अव्यवहारिक ही बनकर रह गई है। अतः यदि कोई संस्कृति है तो वह मानव-संस्कृति ही है या सांस्कृतिक तत्वों के आधार पर मानवों का सुनिर्माण ही है। पर आज भेदभावयुक्त तात्कालिक व्यवहारों को संस्कृति के नाम से उभारा जा रहा है। सभ्यता (अर्थात् सभ्यपना) शब्द सभ्य से भाव अर्थ में तल् (ता) प्रत्यय होकर बनता है। सभ्य शब्द सभा से यत् प्रत्यय होकर सिद्ध होता है जिसका भाव है कि सभा समूह या समाज के योग्य व्यक्ति अर्थात् जो यह जानता है कि दूसरों के साथ कैसे बोलना, वर्तना चाहिए तथा वैयक्तिक अपेक्षाओं के साथ दूसरों का भी ध्यान रखते हुए कैसे और किस प्रकार के वस्त्र आदि व्यावहारिक वस्तुओं को प्रयोग में लाना चाहिए। भाव यह है कि दूसरों की भी सुविधा व कष्ट का ध्यान रखकर किए जाने वाले व्यवहार का नाम ही सभ्यता है, जिससे दूसरों को कष्ट न हो। आईए अब समय आ गया है हम सच्चे अर्थों में मानवता को अपनाकर ही एक सुखी समाज का निर्माण करें।

– आचार्य कर्मवीर

सामाजिक

बाल विवाह : वैदिक संस्कृति के प्रतिकूल

- डॉ. उमाशंकर नगायच

भारतीय संस्कृति की गरिमामय विरासत मध्यकाल के तमसाच्छन्न युग में तिरोहित किंवा विलुप्तप्राय हो रही थी। दीर्घकालीन राजनीतिक पराधीनता के कारण दुर्बल, दरिद्र, दीन-हीन, कुण्ठित एवं दिग्भ्रमित भारतीय समाज बाल विवाह जैसी अनेक कुरीतियों से ग्रसित एवं पीड़ित था। बाल विवाह के प्रचलन के कारण भारतीय समाज में अनेक बुराइयां व्याप्त थीं। जैसे- सन्तानों की अधिकता एवं गर्भपात आदि की दुर्दशा बहुत थी, जिससे माताओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव, बाल विधवा, सती प्रथा आदि अनेक कुरीतियों ने हमारे समाज को कमजोर कर दिया था। बाल विवाह की मजबूरी ने समाज में दहेज जैसी बुराई को जन्म दिया। प्राचीन काल में हमारे समाज में बाल विवाह का प्रचलन नहीं थी, अपितु युवा अवस्था में ही युवक एवं युवतियों के विवाह होते थे। यौवन की अवस्था पूर्ण होने तक वे दोनों ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वेदादि शास्त्रों का सम्यक् अध्ययन और धर्माचरण आदि की शिक्षा ग्रहण करते थे, किन्तु कालान्तर में देश में विदेशियों के आक्रमण होने तथा विदेशियों का राज्य स्थापित होने से इन आक्रान्ताओं द्वारा भारतीय कन्याओं के अपहरण एवं उनकी तथा उन्हें माता-पिता की इच्छा के प्रतिकूल उनसे विवाह करने की बहुतायत हो गई, तब कन्याओं की सुरक्षा इस मध्ययुगीन अंधकार का अवसान १९वीं सदी के नवजागरण के सूर्योदय से हुआ। आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द नवजागरण युग में सर्वाधिक प्रखर समाज सुधारक, अद्‌भुत विद्वान् एवं तेजस्वी महापुरुष के रूप में प्रकट हुए। भगवद्‌पाद दयानन्द ने बाल विवाह का दृढ़तापूर्वक निषेध करते हुए प्राचीनकाल में प्रचलित वेद विहित विवाह पद्धति का प्रतिपादन किया।

विवाह करने का उद्देश्य गृहस्थाश्रम के कर्त्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का भली-भांति निर्वहन करना है। गृहाश्रम में पंचमहायज्ञों का अनुष्ठान एवं तीन ऋणों (देवऋण, ऋषिऋण एवं पितृऋण) से उऋण होने का प्रयत्न किया जाता है। सन्तानोत्पत्ति के द्वारा वंश परम्परा को आगे बढ़ाते हुए व्यक्ति पितृऋण से मुक्त होता है। इस प्रकार सन्तानोत्पत्ति आदि गृहस्थाश्रम के कर्त्तव्यों का सम्यक्, निर्वहन ही विवाह का प्रमुख उद्देश्य है, न कि भोग-विलास। अतः स्वतः सिद्ध है कि विवाह के लिये वर और वधू का वयस्क होना नितान्त आवश्यक है।

महर्षि दयानन्द बाल्यावस्था में विवाह करने के प्रबल विरोधी थे। उनके मत में बाल विवाह समाज के लिये एक अभिशाप है। उन्होने बाल विवाह प्रथा को ही भारतीय समाज की तत्कालीन दुर्दशा का मुख्य कारण बताया। महर्षि दयानन्द ने ब्रह्मचर्यपूर्वक विद्याग्रहण करने के पश्चात् विवाह करने को देश व समाज की उन्नति का मुख्य आधार माना। इसके विपरीत बाल्यावस्था में विवाह करने को अनेक कष्टों, दुःखों एवं देश समाज की अवनति का कारण मानते हुए उन्होने लिखा "जिम देश में इसी प्रकार विवाह की विधि श्रेष्ठ और ब्रह्मचर्य विद्याभ्यास अधिक होता है वह देश सुखी और जिसे देश में ब्रह्मचर्य विद्याग्रहण रहित बाल्यावस्था और अयोग्यों का विवाह होता है वह देश दुःख में डूब जाता है। क्योंकि ब्रह्मचर्य विद्या के ग्रहण पूर्वक विवाह के सुधार ही से सब बातों का सुधार और बिगड़ने से बिगाड़ हो जाता है।"

कालजयी ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश में बाल विवाह की प्रयोजनहीनता और निष्फलता तथा परिपक्व आयु में विवाह करने के लाभ बताते हुए महर्षि ने लिखा है "आठ, नौ और दसवें वर्ष में भी विवाह करना निष्फल है क्योंकि सोलहवें वर्ष के पश्चात् (स्त्री का) चौबीसवें वर्ष पर्यन्त (पुरुष का) विवाह होने से पुरुष का वीर्य परिपक्व शरीर बलिष्ठ, स्त्रीका गर्भाशय पूरा और शरीर भी बलायुक्त होने से संतान उत्तम होते हैं।"

महर्षि दयानन्द युवक-युवतियों के लिये पूर्ण शिक्षा प्राप्ति उपरान्त आयु में विवाह करने के पक्ष में हैं। बाल विवाह के कारण शिक्षा प्राप्ति के अवसर कम हो जाते हैं। स्वामी जी ने लिखा है कि हमारे देश में न्यून अवस्था में विवाह करने की रीति के कारण विद्या संपादन करने में अड़चन होती है। पूना के भाषण में उन्होने कहा कि यदि इस समय हम लोगों में बाल विवाह प्रचलित न होता तो विधवाओं की संख्या कभी इतनी

न होती और इतने गर्भपात और भ्रूण हत्याएं होतीं और न इतने रोगों की अधिकता होती। महर्षि दयानन्द बाल विवाह का प्रखरता से खण्डन करते हुए प्रौढ़ावस्था में विवाह का विधान करते हुए लिखते हैं - "जो बाल्यावस्था में अपने सन्तानों का विवाह कर, करा उनको नष्ट, भ्रष्ट, रोगी, अल्पायु करते हैं, वे अपने कुल का जानो सत्यनाश कर रहे हैं। इसलिए यदि शीघ्र विवाह करें तो वेदारम्भ में लिखे हुए १६ (सोलह) वर्ष से न्यून कन्या और २५ (पच्चीस) वर्ष से न्यून पुरुष का विवाह कभी न करें, करावें। इसके आगे जितना अधिक ब्रह्मचर्य रखेंगे, उतना ही उनको आनन्द अधिक होगा।"

महर्षि दयानन्द के जीवन प्रसंग से जुड़े हुए अनेक दृष्टांत बाल-विवाह निषेध संबी उनके मनोभाव, दृष्टिकोण एवं विचारों को स्पष्ट करते हैं। यथा महर्षि ने कर्तारपुर (सूरत) ग्राम के निवासियों से कहा पुत्रों का छोटी आयु में विवाह करना बहुत बुरा है। संतान के परित्राण के लिये इस कुरीति को अपने में से निकाल दो। जैसे कच्चे खेत को काट लेने से अन्न नष्ट हो जाता है, कच्चे फल और ईख में मिठास नहीं होती, ठीक उसी तरह छोटी आयु में जो संतान का विवाह कर देते हैं, उनका बेटा भी बिगड़ जाता है। संतान में सुख और उन्नति का सदा अभाव ही बना रहता है। इस प्रान्त के कृषकों में यह कुरीति सबसे अधिक है। वहाँ के कृषक स्वामी जी के कथन से बहुत प्रभावित हुए।

महर्षि दयानन्द ने सन् १८७८ में मेरठ में बख्तावरसिंह जी जब महाशय से कहा इस युवक की आयु सोलह वर्ष की प्रतीत होती है। इतनी छोटी आयु में आपने इसका विवाह क्यों किया ? आप पढ़े लिखे सज्जन है। यदि आप लोग ही इस कुप्रथा को न हटायेंगे तो आर्य जाति का सुधार कैसे होगा ? यह बाल विवाह आपकी जाति के जीवन जड़ में धुन बनकर उसका सर्वनाश कर रहा है।

बाल विवाह की कुप्रथा प्रचलित होने के कारण बलवीर्यहीन देखकर दयानन्द इस देश के निवासियों को बच्चों के बच्चे कहा करते थे। महर्षि ने उदयपुर के महाराजा को उपदेश देते हुए १० से १५ अगस्त के मध्य सन् १८८३ में लिखा था कि "अपने राज्य में (न्यूनतम) २५ वर्ष का पुरुष और १६ वर्ष की कन्या का विवाह करने के लिये दृढ़तापूर्वक आज्ञा दीजिये। कुमार और कुमारी का यह समय सनातन आर्ष ग्रन्थस्थ विद्याओं के ग्रहण करने में व्यतीत होवे जिससे सब मनुष्य जाति की सत्य उन्नति होवे।" महाराज मनु ने विवाहित स्त्री के कर्त्तव्यों में गृहकार्यों में दक्ष होना, घर की साज सज्जा, शुद्धि आदि में चतुर होना, आय-व्यय का हिसाब रखना, गृह स्वामिनी होकर सभी वस्तुओं को संभाल कर रखना, यज्ञादि, धार्मिक अनुष्ठानों का आयोजन आदि जो कर्त्तव्य कर्म बताये हैं, उनसे यह स्पष्ट होता है कि ये कर्म किसी अल्पव्यवस्था कन्या के नहीं अपितु समझदार व्यस्का युवती के लिये निहित कर्त्तव्य है। इससे भी यह सिद्ध होता है कि कन्या की विवाह योग्य आयु १६,१७ वर्ष से ऊपर ही उचित है।

महर्षि दयानन्द ने विवाह को भोग, विलास का साधन न मानते हुए उसे धर्माचरण का तथा पितृ ऋण से उऋण होने का पवित्र माध्यम माना है। अतः उन्होने विवाह का सीधा सम्बन्ध संतानात्पत्ति से स्थापित किया और संतानोत्पत्ति के लिए वर और कन्या का वयस्क तथा शारीरिक दृष्टि से पूर्ण (पुष्ट) होना अनिवार्य है। स्वामीजी ने विवाह के लिये वर और कन्या की आयु का निर्धारण करते हुए लिखा कि "सोलहवें वर्ष से लेके चौबीसवें वर्ष तक कन्या और पच्चीसवें वर्ष से लेके ४८वें वर्ष तक पुरुष का विवाह समय उत्तम है।" महर्षि ने विवाह के लिए वर और कन्या की उम्र के निर्धारण में मात्र धार्मिक दृष्टि से ही विचार नहीं किया अपितु विवाह की उम्र को आयुर्वेद की वैज्ञानिक दृष्टि से निर्धारित किया।

विवाह की सही आयु निर्धारित करने के विषय में आयुर्वेद के ग्रन्थ ही सर्वोत्तम प्रमाण होते हैं, क्योंकि उनके अनुसार शरीर के आधार पर उचित-अनुचित का विवेचन होता है। आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रंथ 'सुश्रुत' में शरीर की वृद्धि और क्षीणता के आधार पर चार अवस्थाएँ बताई गई है और तद्नुसार विवाह की आयु निर्धारित की गई है। **"चतस्रो अवस्थाः शरीरस्य वृद्धिः, यौवनं संपूर्णता, किंचित् परिहाणिश्चेति। आषोड़शात् वृद्धिः आपंचविंशतेः यौवनम् आचत्वारिंशत् संपूर्णता, ततः किंचित् परिहाणश्चेति।"** (सुश्रुत सूत्रस्थान ३५/२५) इसे महर्षि ने आयुर्वेदिक सिद्धांतो एवं चिकित्सा शास्त्र के अनुसार स्पष्ट किया। महर्षि दयानन्द ने विवाह के लिये उपयुक्त आयु का निर्धारण शरीर विज्ञान के आधार पर किया। १६वें वर्ष पश्चात् स्त्री का तथा २४वें पश्चात् पुरुष का विवाह होने से पुरुष का वीर्य परिवक्व, शरीर बलिष्ठ, स्त्री का

गर्भाशय पूरा और शरीर बलयुक्त होने से संतान उत्तम होती है। महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश की एक पाद टिप्पणी में युवावस्था परिपक्व होने पर विवाह करने के विषय में धन्वन्तरि के मत का प्रमाण देते हुए लिखा उचित समय से न्यून आयु वाले स्त्री पुरुष को गर्भाधान में मुनिवर धन्वन्तरि सुश्रुत में निषेध करते है -

ऊनषोडषवर्षायामप्राप्तः पंचविंशतिम्।
यद्याधत्ते पुमान्गर्भं कुक्षिस्थः स विपद्यते॥१॥
जातो वा न चिरं जीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः।
तस्मादत्यन्तबालायां गर्भाधानं न कारयेत्॥२॥

अर्थ - सोलह वर्ष से न्यून वय वाली स्त्री में पच्चीस वर्ष से न्यून आयु वाला पुरुष जो गर्भ को स्थापन करे तो वह कुक्षिस्थ हुआ गर्भ विपत्ति को प्राप्त होगा अर्थात् पूर्णकाल तक गर्भाशय में रहकर उत्पन्न नहीं होता अथवा उत्पन्न हो तो चिरकाल तक न जीवे, वा जीवे तो दुर्बलेन्द्रिय हो। इस कारण से अति बाल्यावस्था वाली स्त्री में गर्भ स्थापन न करे। ऐसे ऐसे शस्त्रोक्त नियम और सृष्टिक्रम को देखने और बुद्धि के विचारने से यही सिद्ध होता है कि १६ वर्ष से न्यून स्त्री और २५ वर्ष से न्यून आयु वाला पुरुष कभी गर्भाधान करने के योग्य नहीं होता है। इन नियमों के विपरीत जो करते हैं, वे दुःख भागी होते हैं।

इस प्रकार महर्षि का स्पष्ट अभिमत था कि भली-भांति विद्योपार्जन करके परिपुष्ट शरीर युक्त होकर वयस्क अवस्था में ही विवाह करना चाहिए। युवावस्था ही विवाह की सही अवस्था होती है। इससे पूर्व शरीर की धातुओं में अपरिपक्वता होती है। बाल विवाह से जहाँ शरीर की धातुओं का विकास रुक जाता है, वहीं गर्भ और संतान संबंधी अनेक समस्याएं उत्पन्न हो जाती है जैसे गर्भ का न रहना, गर्भाशय, गर्भपात, दुर्बल सन्तान का जन्म, जन्म के बाद शिशु की शीघ्र मृत्यु सन्तान का अवस्थ रहना आदि। इसी कारण सुश्रुत कार ने २५वर्ष से पूर्व पुरुष के तथा १६ वर्ष से पूर्व कन्या के विवाह का निषेध किया है।

वेद में ब्रह्मचारिणी कन्या द्वारा युवक पुरुष को वरण करने का कथन है - **यथा ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्।** अथर्ववेद ११/५/५ अर्थात् जैसे लड़के पूर्ण ब्रह्मचर्य और पूर्ण विद्या पढ़के पूर्ण जवान होके अपने सदृश कन्या से विवाह करें, वैसे ही कन्या भी अखण्ड ब्रह्मचय से पूर्ण विद्या पढ़ युवति हो, अपने तुल्य पूर्ण युवावस्था वाले पति को प्राप्त होवे। ग्रहण पश्चात् पूर्ण युवा अवस्था वाले पति को प्राप्त होवे। वेदों के मंत्रों के आधार पर महर्षि दयानन्द ने कन्या और वर, दोनों के लिये ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए विद्या ग्रहण पश्चात् पूर्ण युवा अवस्था में विवाह करना उत्तम बताया है। ऐसा करने पर ही विवाह सुख देने वाला और वेदानुकूल अर्थात् ईश्वराज्ञा के अनुकूल होता है। महर्षि ने लिखा है "जैसे ब्रह्मचर्य में कन्या का ब्रह्मचर्य वेदोक्त है, वैसे ही सब पुरुषों को ब्रह्मचर्य से विद्या पढ़, पूर्ण जीवन हो, परस्पर परीक्षा करके, जिससे जिसकी विवाह करने में पूर्ण प्रीति हो, उसी से उसका विवाह होना अत्युत्तम है। जो कोई युवावस्था में विवाह न कराके बाल्यावस्था में अनिच्छित, अयोग्य वर कन्या का विवाह करावेंगे, वे वेदोक्त ईश्वराज्ञा के विरोधी होकर महादुःखसागर में क्योंकर न डूबेंगे? और जो पूर्वोक्त विधि से विवाह करते-कराते हैं, वे ईश्वराज्ञा के अनुकूल होने से पूर्ण सुख को प्राप्त होते हैं।"

विवाह के लिए महर्षि दयानन्द द्वारा मान्य की गई उपयुक्त आयु की सीमा भारत जैसे अधिक जनसंख्या वाले देश के लिये अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकती है। बड़ी उम्र में विवाह करने से एक ओर बाल विवाह से उत्पन्न सभी समस्याएं समाप्त हो सकती है, वहीं दूसरी ओर जनसंख्या वृद्धि पर भी अंकुश लगाया जा सकता है। सीमित साधनों के द्वारा निरंतर बढ़ती हुई जनसंख्या की जीवनोपयोगी सभी मूलभूत आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो पा रही है, सभी को सुख-सुविधाएँ उपलब्ध कराना तो दूर की बात है। परिवार नियोजन की दृष्टि से विवाह की उक्त आयु सीमा अत्यंत उपयुक्त प्रतीत होती है। इस प्रकार महर्षि द्वारा वेदोक्त नियमों एवं परम्पराओं का पालन करते हुए परिपक्व युवावस्था में विवाह करने का विचार अत्यंत उपयोगी एवं सार्थक है।

पता : ११७/६, शिवाजीनगर, भोपाल (म.प्र.)

'मुक्ति के साधन' ईश्वरोपासना अर्थात् योगाभ्यास, धर्मानुष्ठान, ब्रह्मचर्य से विद्याप्राप्ति आप्त विद्वानों का संग, सत्य विद्या, सुविचार और पुरुषार्थ आदि है।

गवेषणात्मक

वेद क्या और क्यों ?

- स्वामी सुधानन्द सरस्वती

वेद का अर्थ ज्ञान। "विद" धातु से "धञ्" प्रत्यय लगाने से वेद शब्द बनता है । अधिकरण अर्थ में सकल ज्ञान-विज्ञानों के आधार पर ग्रन्थ को भी वेद से नामित किया गया है। महर्षि दयानन्द के अनुसार- जिनके पठन, मनन और निदिध्यासन से यथार्थ विद्या का विज्ञान होता है, जिनको पढ़ने से मनुष्य विद्वान् होता है; जिनसे सब सुखों का लाभ होता है और जिनसे सत्यासत्य, धर्माधर्म, कर्त्तव्याकर्त्तव्य, पापपुण्य आदि को ठीक-ठीक निर्धारण करने का विवेक मनुष्य को प्राप्त होता है, उन को वेद कहा जाता है ।

आचार्य सायण के मत में - 'इष्ट अर्थ की प्राप्ति और अनिष्ट अर्थ की निवृत्ति के अलौकिक उपाय को जो ग्रन्थ बतलाता है उसका नाम वेद है ।' विष्णुमित्र की भाषा में - 'जिनसे धर्म , अर्थ, काम, मोक्ष रूप पुरुषार्थ-चतुष्टय जाना जाता है अथवा प्राप्त किया जाता है उनका नाम वेद है।' अमर कोष के टीकाकार क्षीर स्वामी के मत में 'जिस से धर्म को जानते है वह वेद है ।'

वेद ईश्वरीय ज्ञान है । यह किसी व्यक्ति विशेष के द्वारा रचित न होने से इस को अपौरुषेय कहा जाता है । हम देखते है कि ईश्वर ने चक्षु देने से पहले उसकी सहायता के लिए सूर्य, प्यास से पहले जल, भूख से पहले क्षुधा निवारण हेतु अन्न-फलादि एवं प्राणियों की उत्पत्ति से पूर्व पृथ्वी आदि का निर्माण किया है। अर्थात् आवश्यकता बाद में हुई परन्तु उद्भावन पहले किया है। सन्तान का जन्म होते ही वह परमेश्वर माता के स्तनों में दूध बहने की व्यवस्था भी करता है । अतः यह निश्चित है कि मनुष्य को बुद्धि प्रदान करने वाले परमात्मा बुद्धि का मार्गदर्शन करने के लिये, जिज्ञासा को शान्त करने के लिए, बौद्धिक क्षुधा निवारण हेतु अवश्य ज्ञान प्रदान किया होगा। वही वेद है। प्रत्येक सचेतन माता-पिता स्व-सन्तानों को सभ्य, शिक्षित, सुसंस्कृत करने के लिए उनके शिक्षा-दीक्षा की समुचित व्यवस्था करते हैं। उस प्रकार सारे संसार का माता-पिता परमकरुणामय सर्वज्ञ परमेश्वर स्व श्रेष्ठ सन्तान मनुष्य को ज्ञान-विज्ञान सम्पन्न करने के लिए सृष्टि के आरम्भ में अपने नित्य ज्ञान वेद प्रदान किया है। कोई भी कम्पनी किसी भी यन्त्र की बिक्री के समय यन्त्र का उचित व्यवहार के लिए उसका साथ ही एक प्रयोग-विधि-पुस्तिका (Instruction Book) देती है । इस प्रकार हमारे लिए आवश्यक सभी भोग्य वस्तुओं को प्रदान करने वाला परमात्मा उन सब पदार्थों के उपयोग द्वारा ऐहिक व परलौकिक सुख प्राप्त करने के लिए वह हमें उनके उपयोग, प्रयोग की विधि-विधान सृष्टि का सम्विधान वेद दिया है । जीवों के शुभ-अशुभ कर्मों के आधार पर ईश्वर जीवों को सुख-दुःख रूप फल प्रदान करता है । अगर ईश्वर पहले जीवों को धर्म-अधर्म, कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य, उचित-अनुचित, पुण्य-पाप के सम्बन्ध में ज्ञान प्रदान न करके जीवों के अशुभ कर्मों के अनुसार उन्हें दुःख फल देवें तब वह अन्यायकारी सिद्ध होगा। ईश्वर न्यायकारी है। इसलिए वह सृष्टि के आरम्भ में विधि-निषेध कर्मों के विषय में ज्ञान वेद के रूप में देता है और तत्पश्चात् वेद का अनुकूल-प्रतिकूल कर्मों के आधार पर पुरस्कार या दण्ड प्रदान करता है । अतः वेद सभी विचारों तरंगों का प्रथम स्पन्दन, समस्त ज्ञानों का आदि आश्रय, सकल नियमों की आधारशिला, ब्रह्माण्ड का शब्दमय चित्र तथा साहित्य संसार का सर्वप्रथम काव्य है । ईश्वर अग्नि ऋषि के द्वारा ऋग्वेद, वायु ऋषि के माध्यम से यजुर्वेद, आदित्य ऋषि के द्वारा सामवेद और अंगिरा ऋषि के माध्यम से संसार में अथर्ववेद का प्रकाश करता है ।

वेद विश्व-संस्कृति के मूलाधार हैं । भारतीय धर्मशास्त्रों में वेद को सर्वाधिक महत्व प्रदान किया गया है।

महर्षि अत्रि के अनुसार "**नास्ति वेदात् परं शास्त्रम्**" (अत्रिस्मृति१५१) वेद से बढ़कर कोई शास्त्र नहीं है। मनु ने कहा है - "**धर्म जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः**" (मनु. २/१३)- धर्म का प्रकृष्ट ज्ञान के लिए वेद ही परम प्रमाण है। सिर्फ इतना ही नहीं। उन्होंने कहा कि वेद ही धर्म का आदिमूल है - "**वेदोऽखिलोधर्ममूलम्**" (मनु २/६) वर्तमान समाज में प्रचलित धर्म का रूप नदी का अन्तिम धार पर गंगा का जल जैसा प्रदूषित है। वेद में धर्म का सत्यं-शिवं-सुन्दरं स्वरूप गंगोत्री में गंगा के शुद्ध जल जैसा उपलब्ध है।

वेद मानव जाति का सर्वस्व है। सभी भारतीय धार्मिक सम्प्रदाय वेद के प्रति श्रद्धा व सम्मान प्रदर्शन करते हैं। सब एक स्वर में वेद को स्व-धर्म व स्व-संस्कृति का मूलस्रोत रूप में स्वीकार करते हैं। अगर कोई वेद के प्रति श्रद्धा नहीं रखता तो महर्षि मनु की भाषा में वह नास्तिक है - "**नास्तिको वेदनिन्दकः**" (मनु. २/११)। ऐसा क्यों कहा गया है ? वेद में ऐसा क्या है जिससे कि उसकी परिसीमा के बाहर किसी को भी रहने की अनुमति नहीं दिया गया है। वेद की विशेषता है - "**सर्वज्ञानमयो हि सः**" (मनु. २/७) - वेद सब ज्ञान-विज्ञानों के भण्डार है। वेद में विज्ञान-गणित, दर्शन, अर्थनीति, राजनीति, कला, संगीत, समाज-व्यवस्था, वर्णाश्रम-धर्म, पारिवारिक जीवन, विश्व-प्रशासन आदि सभी ज्ञान अन्तर्निहित है। जिस प्रकार बरगद के एक छोटे से बीज में विराट वृक्ष रहता है, उस प्रकार मनुष्य के लिए आवश्यक समस्त विद्या वेद में बीज रूप में विद्यमान है। वेद में सांसारिक के साथ पारलौकिक ज्ञान, भौतिक के साथ आध्यात्मिक ज्ञान तथा अभ्युदय व निःश्रेयस का विवेचना भी उपलब्ध है। महर्षि दयानन्द की भाषा में - "**वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है।**" इस में सृष्टिक्रम विरुद्ध, अवैज्ञानिक, अयौक्तिक, असम्भव गप्पें नहीं हैं।

मनु ने वेद को मानव मात्र का चिरन्तन चक्षु कहा है - "**पितृदेवमनुष्याणां वेदश्चक्षुः सनातनम्**" (मनु. १२/९४)। सुरक्षित यात्रा हेतु भौतिक चक्षु जितना आवश्यक शाश्वत ज्ञान नेत्र "वेद" उससे कहीं अधिक आवश्यक है। मनुष्य समाज आवहमान काल से वेद के द्वारा ही प्रगति का, उत्कर्ष का यथार्थ मार्गदर्शन करता आया है एवं भविष्यत् में भी करता रहेगा। इसलिए ही मनु महाराज ने कहा है- "**भूतं भव्यं भविष्यं च सर्वं वेदात्प्रसिध्यति**" (मनु. १२/९७)। सभी मानवीय समस्याओं का जैसा सरल, सुन्दर व समुचित समाधान वेद में उपलब्ध है, वैसा समाधान अन्यत्र दुर्लभ है।

वेद शिक्षाओं के आगार है। वेद की शिक्षा सार्वभौम, सार्वकालिक, सार्वजनीन, मानवतावादी, प्रेरणाप्रद तथा वर्ग-जाति-रंग-लिंगगत भेदभाव, राग-द्वेष-पक्षपातादि से रहित एवं सब मनुष्यों के लिए समान रूप से कल्याणकारी है। वेद का उदात्त उद्घोष है - "**कृण्वन्तो विश्वमार्यम्**" (ऋग्वेद ९/६३/५) सारे संसार को श्रेष्ठ बनाओ। संसार को श्रेष्ठ करने के लिए वेदोक्त आधारशिला है - "**मनुर्भव**" (ऋक् १०/५३/६) मनुष्य बनो। इस का सफल रूपायन हेतु वेद सत्य, प्रेम, अहिंसा, सेवा, संयम, त्याग, तपस्या, विश्वभ्रातृत्त्व आदि दिव्य मानवीय गुणों के सम्वर्धन के लिए प्रेरित करता है। इस में पारस्परिक सहयोग, शान्तिपूर्ण सहावस्थान व "**वसुधैव कुटुम्बकम्**" की भावना सन्निविष्ट है।

वेद सांसारिक तापों से सन्तप्त लोगों के लिए शीतल प्रलेप हैं, अज्ञानान्धकार में पड़े हुए मनुष्यों के लिए वे प्रकाशस्तम्भ हैं, दिशाहीन लोगों के लिए दिग्वारण यन्त्र, निराशा के सागर में डुबने वालों के लिए वह आशा का वती घर है। शोक से पीड़ित लोगों के प्राणों में यह दिव्य आनन्द एवं उल्लास का सञ्चार करता है, पथभ्रष्टों को यथार्थ पथ प्रदर्शन करता है, कर्त्तव्यविमुखों को कर्त्तव्य का दृढ़ ज्ञान व असीम प्रेरणा प्रदान करता है, अध्यात्मपथ के पथिकों को प्रभु-प्राप्ति के साधनों का उपदेश देता हुआ मार्ग सुगम बनाता है। संक्षेप में वेद अमूल्य रत्नों के भण्डार है।

सभी भारतीय मनीषीओं ने वेदाध्ययन पर जोर दिया है। मनुजी ने तो यहां तक लिखा है - तप करना हो तो बुद्धिमान् व्यक्ति निरन्तर वेद का ही अभ्यास करे, वेदाभ्यास ही ब्राह्मण का परम तप है, (मनु. २/१६६)। महाभाष्यकार महर्षि पतञ्जलि का विचार है कि देखना व सुनना जैसा आखों व कानों के स्वाभाविक धर्म है, वे काम न करने से वे दोनों की स्थिति निरर्थक है, वैसा साङ्गोपाङ्ग वेद का अध्ययन

करना ब्राह्मण (बुद्धिजीवी) का स्वाभाविक धर्म है ।महर्षि दयानन्द की भाषा में वेद का पढ़ना-पढ़ाना व सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। आचार्य वृहस्पति का कथन है कि वेदाध्ययन के द्वारा मनुष्य शीघ्र ही दुःखों से छुट जाता है तथा पवित्र धर्म का आचरण पूर्व सुखविशेष प्राप्त होता है। (बृ.स्म. ७९)। महर्षि याज्ञवल्क्य कहते हैं कि यज्ञ के विषय में, तप के सम्बन्ध में और शुभ-कर्मों के ज्ञानार्थ द्विजों के लिए वेद ही परम कल्याण का साधन है। इसीलिए महर्षि मनु ने कहा है - **योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्। स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः** (मनु. २/१६८) - जो द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) वेदाध्ययन को उपेक्षा कर अन्य कर्मों में लिप्त रहता है वह इसी जीवन में ही अपने कुलसहित शीघ्र शूद्र अर्थात् मूर्ख हो जाता है। अतः स्रष्टा का यह विशाल व बैचित्र्यमय सृष्टि के सम्बन्ध में जानने के लिए, सांसारिक अभ्युदय व परलोक में निःश्रेयस प्राप्त करने के लिए आइए वर्तमान से ही वेदाध्ययन में प्रवृत्त हो जाएं। वेद के सम्बन्ध में अधिक जानने के लिए सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि आर्षग्रन्थ पढ़ें।

पता : श्रुति सदन, सी/७३, सेक्टर-१५,
राऊरकेला-३, सुन्दरगढ़

अव्यस्थित चित्तस्य प्रसादोऽपि भयङ्कर

क्षणे रुष्टाः क्षणे तुष्टाः रुष्टास्तुष्टाः क्षणे क्षणे ।
अव्यवस्थितचित्तानां, प्रसादोऽपि भयङ्करः ॥ (कस्यचित्)

भावार्थ :- अनेक व्यक्ति संसार में ऐसे भी पाए जाते हैं, जो मिनटो में तो प्रसन्न हो जाते हैं और मिनटों में ही नाराज हो जाते हैं। वे क्षण-क्षण में प्रसन्न और अप्रसन्न होते हैं ? उनका हृदय अस्थिर एवं मनः अत्यन्त चलायमान रहता है। इस प्रकार के चलायमान अन्तःकरण के महापुरूषों की कृपा भी भयङ्कर सिद्ध होती है। क्योंकि - उनकी प्रसन्नता का कोई प्रश्न नहीं ? अव्यवस्थित चित्त ही जो ठहरे। अतएव बुद्धिमान पुरुषों को ऐसे लोगों में सदैव सावधान रहना चाहिए।

- सुभाषित सौरभ

गुरु मंत्र

चलोगे सत्य की राह। तो पूरी होगी चाह ॥

अपने कर्त्तव्यों को पूरी ईमानदारी से निभाते रहें, यह सोचकर कि ऊपर वाला आपकी परीक्षा ले रहा है। ऊपर वाले पर विश्वास रखें। वह आपके विश्वास कीपूरीलाज रखेगा। ऊपरवाला ईश्वर भी हो सकता है और आपके ऊपर का अधिकारी भी। यदि आप अपने अधिकारों का दुरुपयोग कर अपनों को लाभ पहुंचाते हैं, तो निश्चित ही आप पर पक्षपात के आरोप लगाते रहेंगे। ऐसे में सत्य की राह से भटकने का परिणाम आपको ही भुगतना पड़ेगा और आपके द्वारा अर्जित मान-सम्मान, प्रतिष्ठा सभी आपके हाथ से चले जाएंगे। तुम्हारे झूठ एक दिन तुम पर भारी न पड़ जाएं। इसलिए यदि **पूरी करनी हो चाह, तो चलो सत्य की राह।**

विचारात्मक

"ऋषिवर देवदयानन्द की राष्ट्र को देन"

- खुशहालचन्द्र आर्य

ऋषिवर देवदयानन्द से पहले आदि शंकाराचार्य व वल्लभाचार्य से लेकर आधुनिक आचार्य करपात्री तक जितने भी आचार्य हुये हैं, उनमें बुद्ध, कबीर, नानक, ईसा, मोहम्मद आदि भी आ जाते है, इन्होने केवल अपने ही मत, पंथ, सम्प्रदाय का प्रचार किया । अपने मतावलम्बियों का हित चाहा और उन्हीं को बढ़ाता दिया । राष्ट्र-चिन्तन, राष्ट्र-प्रेम व राष्ट्र हित के सम्बन्ध में किसी ने दो शब्द भी नहीं कहे। भारत के इतिहास में केवल देव दयानन्द ही एक ऐसे धर्माचार्य संन्यासी, बालब्रह्मचारी व वेदों के प्रकाण्ड विद्वान हुए हैं, जिन्होंने अपने वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ राष्ट्र-प्रेम, राष्ट्र हित के कार्य करने की बात कही है। केवल महर्षि ने ही देश के प्रति समर्पित होने की प्रेरणा दी है। वैसे ते महर्षि दयानन्द ने सर्वांगीण विकास की बात कही है चाहे वह धार्मिक हो, शारीरिक हो, आत्मिक हो, सामाजिक हो व राजनैतिक हो सभी विषयों में अपनी कलम चलाई है पर देशहित पर विशेष जोर दिया है। वे कार्य इसी भांति हैं।

(१) स्वतन्त्रता के प्रथम उद्घोषकर्त्ता :- महर्षि दयानन्द सबसे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने स्वतन्त्रता प्राप्ति का उद्घोष किया। उन्होने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखा कि अपना राज्य चाहे कितना भी बुरा क्यों न हो, तब भी वह विदेशी राज्य से कहीं अधिक अच्छा होता है । इसी को पढ़कर बाल गंगाधर तिलक ने कहा कि "आजादी लेना हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है" और राम प्रसाद बिस्मिल, भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद तथा रोशनसिंह आदि क्रान्तिकारियों ने जो आर्य समाजी विचारों के थे उन्होने स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए अपना जीवन न्यौछावर कर दिया और हँसते-हँसते फाँसी के फन्दे को चूमा। वीर सावरकर, भाई परमानन्द, लाला हरदयाल, लाला लाजपतराय ने अपने जीवन का एक-एक पल व एक-एक श्वांस देश को स्वतन्त्र करने के लिए समर्पित कर दिया, इसी कारण यह कहना उचित ही है कि भारत को स्वतन्त्रता दिलाने में सबसे अधिक भाग आर्य समाजियों ने लिया, इसीलिए पट्टाभिसितारामैया जो कांग्रेसी थे, उसने कांग्रेस का इतिहास लिखा है, उसने स्वीकार किया है कि आजादी की लड़ाई में ८५% आर्य समाजी ही थे। इस प्रकार स्वामी जी के उद्घोष से देश में नवक्रान्ति आई जिससे देश १९४७ के १५ अगस्त को स्वतन्त्र हुआ। इस आजादी पाने का सबसे अधिक श्रेय महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज को जाता है।

(२) नारी उत्थान :- महर्षि के आने से पहले देश में नारी जाति की बड़ी शोचनीय दशा थी। उनको घर की चार दीवारी के भीतर अपमानित होकर सहना पड़ता था। उनको पढ़ने तथा घूमने-फिरने का कोई अधिकार नहीं था। घर में लड़का पैदा होता तो घर में थाली बजाकर खुशी मनाई जाती थी और जब लड़की होती थी तो पूरे घर में उदासी छा जाती थी। महर्षि दयानन्द ने नारी जाति को पुरुष के समान अधिकार दिलाया और उसको पढ़ने-पढ़ाने का भी अधिकार दिलाया। महर्षि ने कहा कि स्त्री-पुरुष गृहस्थ रुपी गाड़ी के दो पहिए हैं। यह दोनों समान होने चाहिए तभी गाड़ी ठीक चलेगी नहीं तो गृहस्थ में लड़ाई-झगड़ा रहेगा और गृहस्थ दुःखी बना रहेगा। यह महर्षि जी की ही कृपा है जो इंदिरागांधी नारी के साथ-साथ विधवा होते हुए भी भारत की प्रधानमंत्री बनी। ममता बनर्जी व जयललिता मुख्यमंत्री बनी और मुसलमानों में नारी पर और भी अधिक पाबन्दी है फिर भी महर्षि जी की जागृति से बेनजीर भुट्टों भी पाकिस्तान की प्रधान मंत्री बनी थी।

(३) अछूतोद्धार :- महर्षि जी के आने से पहले नारी-जाति से कुछ कम या अधिक अपमानित जीवन अछूत (हरिजन)भाईयों का था। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य उनकी परछाई से भी घृणा करते थे। यदि कोई हरिजन यानि अछूत बगल से भी निकल जाता था तो उसे पहले तो सौ गाली देते फिर स्नान करते थे तब उनको शान्ति मिलती थी। उनको पढ़ने का तथा पूजा-पाठ करने के लिए मन्दिर में प्रवेश होने का अधिकार नहीं था। उनका जीवन पूर्ण दुःखी व अपमानित था। जिसके कारण हमारे अछूत (शूद्र) भाई विदेशियों के लोभ, लालच व भ्रम में आकर हिन्दू धर्म छोड़कर मुसलमान व ईसाई बनने लगे। महर्षि ने जब अपने अछूत भाईयों की यह दशा देखी तो उनका हृदय रो पड़ा और उनको पढ़ने का तथा मन्दिरों में प्रवेश होने का अधिकार दिलाया। महर्षि ने कहा कि ईश्वर के सभी मनुष्य ही नहीं बल्कि प्राणी-मात्र ही पुत्र-पुत्रियों के समान है इसलिए ईश्वर सबका माता-पिता हैं और हम सब परस्पर भाई-भाई हैं। इसलिए एक भाई से घृणा करना का कर्त्तव्य नहीं है। इसीलिए आज अछूतों को हर काम में बराबर का अधिकार है और अछूत बड़े से बड़े पद पर जाने का अधिकारी बन गया है। इसीलिए जगजीवनराम जी चमार जाति से थे वे भारत के उपप्रधानमंत्री बने। मायावती जी नारी भी और हरिजन भी है वह उत्तरप्रदेश की मुख्यमंत्री बनी। यह सब महर्षि जी की ही कृपा है।

(४) जाति जन्म से नहीं कर्म से होती है :- प्राचीनकाल में महाभारत तक जब विश्वभर में वैदिक धर्म ही था, तब हर आठ वर्ष का बच्चा या बच्ची को गुरुकुल में भेजना अनिवार्य था। जब ब्रह्मचारी पूर्ण विद्या पढ़कर गुरुकुल छोड़कर घर आने की तैयारी करता था, तब गुरुकुल का आचार्य ब्रह्मचारी का समावर्त्तन संस्कार करके उसका वर्ण निर्धारित करना था, यानि गुण, कर्म, स्वभाव से वह ब्रह्मचारी ब्राह्मण है, क्षत्रिय है, वैश्य है या शूद्र है, उसी के अनुसार उनको वर्ण मिल जाता था और उसका विवाह भी उसी गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार उसी वर्ण की लड़की से करवा देता था और उसी वर्ण में रहते हुए वह अपना सुखी जीवन व्यतीत करा था। जब तक भारत में यह व्यवस्था बनी रही तब तक देश उन्नत व सम्पन्न बना रहा और विश्व का गुरु बना रहा। महाभारत के विकराल युद्ध के बाद सभी स्वार्थ के लिए गुण, कर्म, स्वभाव को छोड़ जन्म से जाति मानने लगे तभी से देश पतति होना आरम्भ हो गया। महर्षि दयानन्द ने इस बात को समझ लिया और वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार करते हुए, गुण, कर्म, स्वभाव से वर्ण स्थापित होने पर जोर दिया जिससे अब कुछ सुधार होता दिखाई दे रहा है।

(५ अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड पर कड़ा प्रहार :- महाभारत से एक हजार वर्ष पूर्व से वेद ज्ञान का ह्रास्य होने लगा था, पूरे देश में अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड के पैर जमने लगे थे। महाभारत के भीषण युद्ध में विश्व के सभी विद्वान्, आचार्य, योद्धा तथा वीर पुरुष समाप्त हो गये थे। और स्वार्थी, अज्ञानी लोगों का प्रभुत्व हो गया था, जिससे देश में अनेक मत-मतान्तर फैल गये और अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड का बोलबाला हो गया। भूत-प्रेत, गण्डा-डोरी, फलित ज्योतिष, श्राद्ध तर्पण, शगुन-अपशगुन आदि अनेक अन्धविश्वास व पाखण्ड कुछ कुरीतियाँ जैसे बाल विवाह, सती प्रथा आदि चल पड़े जिससे देश पतन की ओर अग्रसर हो गया। साथ ही जैनियों की मूर्ति पूजा करने से जैन धर्म को बढ़ता देखकर हिन्दुओं ने भी राम व कृष्ण को अवतार घोषित करके उनकी पूजा करवानी आरम्भ कर दी, जिससे हिन्दू जैन धर्म में जाने से तो रुक गये लेकिन मूर्ति पूजा से हिन्दूओं को बड़ा नुकसान पहुंचा। सही ईश्वर उपासना जो स्तुति प्रार्थनोपासना है उसको छोड़कर सभी मूर्ति पूजा में लग गये। मूर्तिपूजक चरित्र को गौण और मूर्ति पूजा को मुख्य समझने लगे जिससे देश की चरित्र की हानि हुई और देश पतन की ओर बढ़ने लगा। जब महर्षि दयानन्द ने देस की यह पतित अवस्था देखी और यह समझ लिया की यह स्थिति वेदज्ञान जो ईश्वरीय ज्ञान है उसके प्रायः लुप्त हो जाने से यह स्थिति बनी है। तब महर्षि ने अनेक दुःख कष्ट व अभावों को सहकर अपने सच्चे गुरु स्वामी विरजानन्द की गोद में बैठकर करीब तीन साल तक वेद ज्ञान का अध्ययन किया और गुरु आज्ञा से ही वेद ज्ञान का प्रचार व प्रसार करने का व्रत लेकर वेदों का प्रचार किया जिससे देश में नव जागृति आई और हिन्दुओं में जो कुरीतियाँ, कुप्रथायें, अन्धविश्वास व पाखण्ड था उन पर कुछ अंशों में रोक लग गई जिससे देश वेद ज्ञान

की ओर अग्रसर हुआ और उससे स्थिति में काफी सुधार आया।

(६) आर्य बाहर से नहीं आये :- जब देश अंग्रेदों के अधीन हुआ तब हिन्दुओं के स्वाभिमान को नष्ट करने के लिए भारत के इतिहासकारों को कुछ लोभ, लालच देकर उससे भारत के इतिहास में कुछ गलत बातें लिखवा दी। पहली बात तो यह लिखवाई कि आर्य भी ईरान से या मध्य एशिया से आये आदि बाहर से आये थे। दूसरी बात यह लिखलाई कि भारत के ऋषि-मुनि जो वैदिक काल में हुए थे, वे भी गो-मांस खाते थे आदि। जिससे हिन्दुओं का गौरव तो घटा ही साथ ही उनका विशेष महत्व भी समाप्त हो गया। इस स्थिति को समझकर महर्षि जी ने वेदों के आधार पर कहा कि ईश्वर ने सृष्टि के आदि में तिब्बत के पठार पर कृत्रिम गर्भाशय बनाकर युवा अवस्था में अनेक नर-नारी उत्पन्न किये जिससे आगे की सृष्टि चले। वहां पर आर्य व अनार्य दोनों थे हजारों वर्ष बाद उनका परस्पर झगड़ा होने से तिब्बत के पठार से आर्य नीचे आ गये। जिस भांग में आर्य बसे उन्होंने उस प्रदेश को आर्यावर्त्त कहना आरम्भ कर दिया और स्वयं को आर्य कह कर रहने लगे। वहीं आर्य कालान्तर में हिन्दू बने। इस प्रकार हिन्दू यानि आर्य और आर्यावर्त्त यानि हिन्दुस्तान के आदि निवासी है, न कि बाहर से आये हैं। महर्षि ने एक बात और कही यदि आर्य बाहर से आये हैं तो आर्यों के आने से पहले इस देश का क्या नाम था, हमें इतिहास में लिखा दिखाओ। इस बात पर सबकी बोली बन्द हो गई। महर्षि के बाद स्वामी सम्पूर्णानन्द तथा अन्य कई इतिहासकारों ने इस बात को माना।

(७) गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का समर्थन किया :- वैदिक काल में ही केवल भारत में ही नहीं पूरे विश्व में गुरुकुल शिक्षा का प्रचलन था। उनसे जो ब्रह्मचारी निकलते थे वे पूर्ण चरित्रवान, ईश्वर विश्वासी, विद्वान्, साहसी, शक्तिवान, धैर्यवान तथा समाज धर्म व राष्ट्र के रक्षक होते थे, जिससे केवल एक राष्ट्र ही नहीं बल्कि मानव मात्र वेदानुकूल चल कर मोक्ष प्राप्ति के अधिकारी बनते थे। जब से अंग्रेज भारत में आये तब से अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार होना आरम्भ हो गया और देश पश्चिमी सभ्यता की ओर जाने लगा। महर्षि ने यह स्थिति देखकर गुरुकुल शिक्षा का प्रचार किया और उनके बाद उनके शिष्य स्वामी श्रद्धानन्द, स्वामी ओमानन्द, स्वामी आदि ने गुरुकुल शिक्षा पद्धति का बहुत प्रचार किया। आज तो देश में हजारों की संख्या में गुरुकुल खुले हुए हैं जिनसे अच्छी उम्मीद रखी जा रही है।

(८) देश के महान पुरुषों के चरित्र को संवारा :- देश के महान् पुरुष श्रीकृष्ण, हनुमान, बाली, सुग्रीव आदि के बारे में काफी गलत बातें जोड़ रखी थीं। सबसे अधिक तो भगवान श्रीकृष्ण जैसे महान् योगी को एक चरित्रहीन, नचनवा, लड़कियों के पीछे घूमने वाला, अनेकों पत्नियों को रखने वाला रखा था। महर्षि ने उसको एक महान् योगी, एक पवितत्रता एक महान योद्धा बतलाकर उनके चरित्र को केवल संवारा ही नहीं बल्कि यह लिखकर कि श्री कृष्ण ने जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त कोई गलत काम किया ही नहीं। उनके जीवन को और अधिक उज्ज्वल बना दिया।

(९) शुद्धि प्रता का प्रचलन किया :- हमारे गरीब, अनपढ़ व लाचार हिन्दू वनवासी भाई-बहनों जिन्होने भय, लोभ, लालच से धर्म परिवर्तन कर लिया था। उनको पुनः हिन्दू बनाया और हिन्दू को संजीवनी बूटी पिलाई।महर्षि देवदयानन्द द्वारा संचालित इन सब कार्यों से देश में नव-जागृति आई जिससे भारत उन्नत और समृद्धि की ओर बढ़ रहा है। वह दिन दूर नहीं जब हमारा देश पुनः विश्व गुरु व सोने की चिड़िया कहलाने लगेगा।

पता :- गोविन्दराम आर्य एण्ड संस, १९०, महात्मा गांधी रोड, (दो तल्ला), कोलकाता-७०००७

संसार नाना मार्गों में भटक रहा है। अज्ञान ने सत्य को मिटाकर अशान्ति को जन्म दिया है। ऐसे में आवश्यकता है कि हम महर्षि दयानन्द के बताए मार्ग पर चलें। मनुष्य और मनुष्य के मध्य खड़ी भेद की दीवारों को गिराने के लिए ऋषि दयानन्द का संदेश ही एक मात्र मार्ग है।

\- भारतेन्द्र नाथ

ऐतिहासिक तथ्य

द्रौपदी के पति युधिष्ठिर हैं

- महात्मा चैतन्यमुनि

अपने ग्रन्थ महाभारत पर एक हजार प्रश्नोत्तर (विजय कुमार गोविन्दराम हासानन्द दिल्ली से प्रकाश्य) से कुछ प्रश्नोत्तर यहां दे रहा हूँ जिससे यह साफ हो सके कि द्रौपदी जी के पति धर्मराज युधिष्ठिर ही हैं।

प्रश्न - यह बात प्रसिद्ध है कि जब पाण्डव द्रौपदी को स्वयंवर से जीत कर लाए और लौटकर उन्होने बाहर से ही कुन्ती से कहा कि आज हम एक विशेष-वस्तु लाए हैं तो कुन्ती ने उन्हें कहा कि आप सभी भाई उसे बांटकर खाओ । क्या इसीलिए द्रौपदी पांच पतियों की पत्नी थीं ?

उत्तर - यह कथ्य प्रक्षिप्त है क्योंकि अर्जुन द्वारा लक्ष्य-वेध किए जाने पर यह सूचना कुन्ती को देने के लिए नकुल व सहदेव को साथ लेकर युधिष्ठिर वहां से तुरन्त पहले ही चले आए थे। कुन्ती को मालूम था कि भीम व अर्जुन द्रौपदी को स्वयंवर में जीत कर आ रहे हैं। अतः बांट के खा लेने वाली बात कल्पना-प्रसूत है और इस प्रकार की विवेकहीन बात कुन्ती जैसी विदुषी द्वारा कैसे कही जा सकती है ? एकचक्रा नगरी से द्रौपदी के स्वयंवर की बात सुनने पर कुन्ती ने स्वयं ही वहां जाने का प्रस्ताव रखा था तथा मार्ग में महर्षि व्यास ने भी पांचाल देश जाने की सम्मति देते हुए कहा था कि 'द्रौपदी को पाकर तुम सब लोग सुखी होओगे, इसमें संशय नहीं।' धौम्य पुरोहित का वरण करने पर पाण्डव आश्वस्त हुए थे कि अब स्वयंवर में द्रौपदी भी हमें मिल जाऐगी । भीम तथा अर्जुन द्रौपदी को लेकर आए तो उनके साथ ब्राह्मण-मण्डली, श्रीकृष्ण व बलराम भी साथ आए थे। अतः न तो पाण्डवों ने कहा कि हम भिक्षा लेने के लिए जाना तथा कुन्ती को यह सब मालूम होते हुए भी कि अर्जुन ने द्रौपदी को स्वयंवर में जीत लिया, उनके द्वारा यह कहना कि सभी भाई बांटकर खा लो अविश्वसनीय एवं नीन्दनीय है... ।

प्रश्न - तो पांचों पाण्डवों में से द्रौपदी किसकी पत्नी थीं ?

उत्तर - यद्यपि स्वयंवर की शर्त अर्जुन ने ही पूरी की थी मगर द्रौपदी युधिष्ठिर की पत्नी थी इस बात के अनेक प्रमाण एवं तथ्य महाभारत के गहन चिंतन से हमें प्राप्त हो जाते हैं। कुन्ती द्वारा बांट कर खाने वाली बात तो एकदम ही असंभव एवं अविश्वनीय है। यदि बांटकर खाने वाली बात है तो फिर वह भीम तथा अर्जुन की ही पत्नी होनी चाहिए क्योंकि युधिष्ठिर तो नकुल और सहदेव को लेकर पहले ही लौट आए थे। द्रौपदी को तो भीम तथा अर्जुन ही लेकर आए थे तथा यह बंटवारा उसी दिन हो जाना चाहिए था जबकि यह बंटवारे की बात नारदजी के मुंह से स्वयंवर के लगभग बीस वर्षों के बाद कहलाई गई है । वास्तव में बांटकर खाने वाले प्रक्षेप को व्यवहारिक एवं सत्य बनाने के लिए अनेक प्रक्षेप कल्पित करके महाभारत में जोड़ने का प्रयास किया गया मगर गहन चिंतन एवं तथ्यों के आधार पर उन प्रक्षेपों का महल स्वयं ही धराशाई हो जाता है ... ।

प्रश्न - द्रुपद की हार्दिक इच्छा थी कि अर्जुन ही द्रौपदी का पति बने तथा स्वयंवर की शर्त भी अर्जुन ने ही पूरी की थी और स्वयंवर की शर्त पूरी होते ही द्रौपदी ने अर्जुन के गले में वरमाला डालकर उसे अपना पति बना लिया था। ऐसी दशा में द्रौपदी को अर्जुन की ही पत्नी क्यों न मान लिया जाए ?

उत्तर - केवल स्वयंवर की शर्त पूरी करने से ही कोई किसी का पति नहीं हो जाता था। विवार संस्कार की प्रक्रियाओं के बाद ही कोई किसी का पति बनता है। आज की स्थिति में भी यदि हम कल्पना करें कि कोई व्यक्ति किसी कन्या को बलपूर्वक या किसी प्रकार से ही प्राप्त कर लेता है, तो क्या इतने मात्र से ही कानूनी व सामाजिक रुप से वह उसका पति माना जा सकता है ? विवाह-संस्कार की सप्तसदी प्रक्रिया के पूर्ण होने पर ही आज भी विवाह को कानूनी-रुप से मान्यता प्राप्त है.... विधिवत् विवाह-संस्कार हो जाने के बाद ही वर व वधु पति-पत्नी बनते हैं और यदि माला डालने से ही विवाह मान लिया जाए तो भी द्रौपदी पांचों भाईयों की पत्नी

कैसे सिद्ध हो गई ? फिर तो वह अर्जुन की ही पत्नी हुई मगर विवाह के लिए केवल शर्त पूरी कर देना ही पर्याप्त नहीं है। महाभारत में ही भीम जी युधिष्ठिर को उपदेश देते हुए कहते हैं कि मानव के हित से सम्बन्ध रखने वाला कोई भी कर्म व्यवस्था के अधीन आता है। सब विचारवान् पुरुष एकत्र होकर जब यह विचार कर लें कि 'अमुक कन्या अमुक पुरुष को देनी चाहिए' तो यह व्यवस्था ही विवाह को निश्चय कराने वाली है। जो लोग भिन्न-भिन्न व्यक्तियों से कहते हैं कि मैं आप को अपनी कन्या दूंगा, जो कहते हैं नहीं दूंगा, जो कहते हैं अवश्य दूंगा, उनकी सब बातें कन्यादान से पहले कही होने के कारण ना कही के समान ही है। जब तक कन्या का पाणिग्रहण-संस्कार नहीं हो जाए, तब तक कन्या को मांगा जा सकता है... सप्तसदी के सातवें पग में पाणिग्रहण के मन्त्रों की सफलता होती है। (४४-२०२१)। इस प्रकार भले ही द्रुपद की इच्छा रही हो कि द्रौपदी अर्जुन की पत्नी बने तथा अर्जुन ने स्वयंवर की शर्त पूरी कर ली हो मगर बड़े-बूढ़ों ने मिलकर निर्णय किया कि द्रौपदी का विवाह युधिष्ठिर से किया जाए और तब जिस दिन युधिष्ठिर के साथ द्रौपदी का पाणिग्रहण सप्तसदी सहित पूरा हो गया उसी दिन द्रौपदी युधिष्ठिर की पत्नी हो गई। मनु महाराज ने भी कहा है - 'पतित्वं सप्तमे पदे।'

प्रश्न - क्या इतिहास में इस प्रकार की घटनाएँ हुई हैं ?

उत्तर - श्रीरामजी द्वारा स्वयंवर की शर्त पूरी कर लेने पर ही उनका विवाह पूर्ण नहीं हुआ था बल्कि विधिवत् विवाह संस्कार होने के बाद ही वे पति-पत्नी बने थे। भीष्म काशीराज की तीनों कन्याओं अम्बा, अम्बिका तथा अम्बालिका को विजय करके लाए थे मगर उनमें से बड़ी को उसकी इच्छानुसार राजा शाल्व के पास भेज दिया था तथा दो का विवाह विधिवत् विचित्रवीर्य के साथ हुआ था। राक्षस पुलोमा ने अग्निदेव से कहा था कि जिस कन्या का विवाह उसके पिता ने भृगु के साथ कर दिया वह अपने पहले मुझे दी थी। अतः यह भृगु की नहीं मेरी पत्नी है। अग्निदेव ने कहा कि इसमें सन्देह नहीं कि पहले यह कन्या तुम्हें दी गई थी मगर विधिपूर्वक मन्त्रोच्चार करते हुये तुमने उसके साथ विवाह नहीं किया है इसलिए इसके पिता ने इसे भृगु को दिया है। गंगा ने पहले राजा प्रदीप को वरा था मगर राजा प्रदीप ने उसका विवाह अपने पुत्र शान्तनु के साथ करके उसे अपनी पुत्र-वधु बनाया था। उत्तरा के साथ भी यही हुआ उसके पिता विराट् ने उसे अर्जुन को दे दिया मगर अर्जुन ने उसका विवाह अपने पुत्र अभिमन्यु से किया ..।

प्रश्न - क्या द्रौपदी और युधिष्ठिर के विवाह के लिए द्रुपदादि तथा अर्जुन भी सहमत थे ?

उत्तर - युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा (अ.प.१९०-७) कि तुमने द्रौपदी को जीता है, इसलिए तुम्हारे साथ ही इसकी शोभा होगी। तुम अग्निदेव के साक्ष्य में विधिवत् इसका पाणिग्रहण करो मगर अर्जुन ने उत्तर में कहा (आदि.प.१९०-८,९) कि बड़े भाई के अविवाहित होने की दशा में छोटे का विवाह होना धर्म-संगत नहीं है, ऐसा व्यवहार अनार्यों में देखा गया है, आर्यों का यह धर्म नहीं है। अतः आप मुजे पाप का भागी न बनाएँ, पहले आपका विवाह होना चाहिए। अर्जुन ने शास्त्र-सम्मत ही बात कही थी क्योंकि मनु महाराज (३-१७१-१७२) ने भी ऐसी ही व्यवस्था दी है। अर्जुन के विचार जानने के बाद ही कुन्ती की सम्मति से युधिष्ठिर महाराज द्रुपद के पास गए अपना परिचय देने के बाद द्रुपद को अर्जुन की भावना से अवगत कराते हुए कहा कि अभी मेरा विवाह नहीं हुआ है। इस पर महाराज द्रुपद ने कहा (आदिप. १९४-२०) 'यदि ऐसा है तब आप ही मेरी पुत्री का विधिवत् पाणिग्रहण कर लें...।' महर्षि व्यास जी की भी इसमें सम्मति थी।

प्रश्न - द्रौपदी का युधिष्ठिर के साथ पाणिग्रहण संस्कार का महाभारत में कोई उल्लेख है ?

उत्तर - जब महर्षि व्यासजी एकान्त में द्रुपद से बात करके लौटे तो युधिष्ठिर से आकर कहा - पाण्डुनन्दन ! आज ही तुम लोगों के लिए पुण्य दिवस है। आज चन्द्रमा भरण-पोषण-कारक पुष्य नक्षत्र पर जा रहा है। इसलिए तुम आज ही तुरन्त कृष्णा का पाणिग्रहण करो (आदिप. १९७-५) द्रौपदी के विवाह का वर्णन आदि पर्व (१९७-११,१२) में इस प्रकार किया गया है - तत्पश्चात् वेद के पारंगत मन्त्रज्ञ धौम्य ने प्रज्वलित अग्नि की स्थापना करके मन्त्रों द्वारा आहुतियाँ दी और युधिष्ठिर के साथ कृष्णा का गठबन्धन

कर दिया। वेदज्ञ विद्वान् पुरोहित ने उनका पाणिग्रहण करा, अग्नि की परिक्रमा करवाई, फिर विवाह सम्पन्न कराकर पुरोहित जी राज-भवन से चले गए। इस प्रकार युधिष्ठिर के साथ द्रौपदी का विवाह होने के तो महाभारत में प्रमाण है मगर अर्जुन के साथ विवाह होने का कोई एक भी प्रमाण नहं है।

प्रश्न - कहा गया है कि पिछले जन्म में पति-पत्नी के लिए एक मुनि की कन्या ने कठोर तप किया तथा तथा भगवान् शंकर ने पांच पतियों की पत्नी होने का वरदान दिया था। क्या यह सत्य नहीं है ?

उत्तर -प्रक्षेप-कर्त्ता को एक झूठ को सत्य सिद्ध करने के प्रयास में अनेक कपोल-कल्पित प्रसंग गढ़ने पड़े तथा इसी के अन्तर्गत उसने (आदिप. १९६-४० से ५३) मुनि-कन्या के तप की बात कल्पित की मगर इस माध्यम से उसने शंकर को भी अल्पज्ञ तथा हास्यास्पद बना दिया। पांच पतियों का वरदान देने के लिये शिवजी तर्क देते हैं कि तुमने 'मुझे पति दीजिए यह वाक्य पांच बार दोहराया इसलिए तुम्हें पांच पतियों का वरदान दिया' क्या शंकर इसे अल्पज्ञ थे कि वे उस क्या के मनोभाव को नहीं समझ सके ? क्या वे इस प्रकार का वेद-विरुद्ध वरदान दे सकते हैं ? क्या वे जरा सा भी लोक-व्यवहार नहीं जानते थे ? इससे तो महाराज द्रुपद, महर्षि वे-व्यास तथा धृष्ट्युम्न अधिक बुद्धि हैं जो इस प्रकार के कार्य को (आदिप. १९०-२७, २८/१९५-६, ७, ८, १०, ११, १२० अधर्म तथा वेद-विरुद्ध बताते हैं।

प्रश्न - महाभारत में (आदि पर्व २२०-७५८०) बताया गया है कि द्रौपदी के युधिष्ठिर से प्रतिविन्ध्य, भीम से सुतसोम, अर्जुन से श्रुतकर्मा, नकुल से शतानिक तथा सहदेव से श्रुतसेन नाम के पांच पुत्र पैदा हुए। क्या इससे भी यही सिद्ध नहीं होता कि द्रौपदी के पांच पति थे .... ?

उत्तर - हमने पहले भी कहा है कि एक झूठ लिखने वाले को उस झूठ की संगति बिठाने के लिए इतने झूठ लिखने पड़े कि स्वयं ही उसके झूठ की पोलें खुलती चली गई। द्रौपदी के पांच पुत्र पांचों पाण्डवों से होने की क्लपना भी तथ्यहीन है। पाण्डवों के अपनी-अपनी पत्नियों से ही ये पुत्र थे।

प्रश्न - द्रौपदी युधिष्ठिर की ही पत्नी थी इस बात के और क्या-क्या प्रमाण हैं ?

उत्तर - द्रौपदी युधिष्ठिर की ही पत्नी थी इसके कितने ही प्रमाण दिए जा सकते हैं। हमने ऊपर सिद्ध किया कि द्रौपदी का विधिवत् पाणिग्रहण युधिष्ठिर के साथ ही हुआ था। विराट्-नगरी में जब कीचक ने द्रौपदी को परेशान किया तथा वह सहायता के लिए भीम के पास गई तो उसके द्वारा कुशल होने की बात पूछने पर उसने कहा कि जिसके पति युधिष्ठिर हों वह बिना शोक के रहे यह कैसे संभव है ? (विराट पर्व १८-१) वहां सब दासियां भीम और उसके सम्बन्धी के बारे में सन्देह करती है तो द्रौपदी को अपने छोटे देवर के साथ उसका नाम जोड़ने से दुःख होता है (विराट पर्व १९-१०, ११, १२) यदि भीम भी पति होता तो उसे कष्ट क्यों होता ? यही नहीं जब वह भीम से कहती है कि जिसके बहुत से भाई, श्वसुर और पुत्र हों ऐसी कौन स्त्री ऐसे कष्ट भोगने के लिए विवश हुई होगी (विराट पर्व २०-१३) यहां उसने नहीं कहा कि जिसके बहुत से पति हों। कीचक को मारकर भीम कहता है कि जिसने मेरे भाई की पत्नी (मेरी पत्नी नहीं कहा) का अपहरण करने की चेष्टा की थी उस कीचक को मारकर आज मैं उऋण हुआ (विराट पर्व २२-७९)। कोई अपनी पत्नी को ही दांव पर लगा सकता है इसलिए जुए में द्रौपदी को दांव पर लगाना भी यही सिद्ध करता है कि द्रौपदी युधिष्ठिर की ही पत्नी थी। उसने भरी सभा में कौरवों (तथा अन्य लोगों से) से भी यही कहा था (६९-११-९०७) कि मैं धर्मराज युधिष्ठिर की पत्नी हूँ।

जयद्रथ वन में जब द्रौपदी की कुशलता पूछता है कि द्रौपदी स्वयं की कुशलता के साथ-साथ (१२-२६७-१६९४) कहती है कि मेरे पति युधिष्ठिर तथा उनके भाई भी कुशल है और फिर (२७०-७-१७०१) युधिष्ठिर की ओर संकेत करते हुए साफ कहती है कि ये मेरे पति हैं। सन्धि कराने के लिए गए श्रीकृष्ण दुर्योधन को धिक्कारते है (२८-८-२३८२) 'दुर्योधन तेरे अतिरिक्त और ऐसे अधम कौन है जो बड़े भाई की पत्नी को सभा में लाकर उसके साथ वैसा अनुचित व्यवहार करे जैसा तूने किया है।' श्रीकृष्ण ने द्रौपदी को दुर्योधन के बड़े भाई (युधिष्ठिर) की ही पत्नी कहा है। स्वयं को युधिष्ठिर की पत्नी घोषित करते हुए (शान्ति पर्व १४-५-४४५१) द्रौपदी गौरान्वित होती है। स्वयं युधिष्ठिर

भी अपनी पत्नी द्रौपदी को घसीटते हुए सभा में लाए जाने से दुःखी है तथा वनवास के समय भीम से कहते हैं ५२-४४-१०९४) मेरी पत्नी द्रौपदी केश पकड़कर सभा में लाई गई थी, वह मैं कैसे भूला सकता हूँ। दुर्योधन को लताड़ते हुए स्वयं धृतराष्ट्र (सभा पर्व ७१-२५-९१२) कहते हैं कि तू धर्मराज युधिष्ठिर की पत्नी द्रौपदी को लाकर पापपूर्ण बात कर रहा है। इन्द्रप्रस्थ आकर अर्जुन की पत्नी सुभद्रा ने द्रौपदी के पांव छुए तो द्रौपदी उसे आशीर्वाद देती (२२०-२४-६२) है- बहिन- । तेरा पति शत्रु-रहित हो। द्रौपदी अन्य स्थानों पर भी (वन पर्व २६-३४-३५) स्वयं को युधिष्ठिर की ही पत्नी कहा है। भीम, अर्जुन, नकुल व सहदेव ने कही भी द्रौपदी को पत्नी स्वीकार नहीं किया और न ही द्रौपदी ने कही उन्हें अपना पति कहा है ...।

प्रश्न - आपके उपर्युक्त विवेचन से भली प्रकार सिद्ध हो गया कि द्रौपदी धर्मराज युधिष्ठिर की ही पत्नी थी मगर (विराट पर्व २२-९०-१९१५) में द्रौपदी ने पांच गन्धर्वों (नाम व रुप बदले हुए पाण्डवों) को अपना पति कहा है इसका क्या समाधान है ?

उत्तर - जब उपरोक्त विवेचन से भली प्रकार यह सिद्ध हो गया है कि द्रौपदी महाराज युधिष्ठिर की ही पत्नी थी तो फिर पुनः उन्हें अन्य पाण्डवों की पत्नी सिद्ध करने का प्रयास व्यर्थ ही ही नहीं बल्कि महापाप है। पति शब्द का अर्थ केवल घरवाला ही नहीं होता है बल्कि पा-रक्षणे '**सं पति**' का अर्थ रक्षा करने वाला 'रक्षक' होता है। कीचक के प्रसंग में ही द्रौपदी स्वयं को युधिष्टिर की पत्नी तथा भीम अपरने भाई की पत्नी कह चुका है अतः यहां द्रौपदी के कहने का तात्पर्य यह है कि पांच गन्धर्व सदा उसकी रक्षा किया करते हैं ... द्रौपदी ने एक बार नहीं बहुत बार यह बात कही है कि उसके इन्द के समान पांच पति हैं मगर द्यूत सभा में यह स्पष्ट शब्दों में कहती है (सभा पर्व ६७)- 'मैं पाण्डवों की सहधर्मिणी हूँ, मैं धर्मात्मा युधिष्ठिर की भार्या हूँ।'

प्रश्न - क्या आपको लगता है कि महाभारत में प्रक्षेप करने के पीछे भारतीय-संस्कृति तथा आदर्शों को हेय बताने, महाभारत को कल्पनीय तथा अविश्वसनीय सिद्ध करने तथा हमारे सम्माननीय महापुरुषों को चरित्रहीन आदि बताने का ही एक षड़यंत्र है ?

उत्तर :- बिल्कुल ठीक, यही बात है। प्रक्षेपक ने जिस द्रौपदी को पांच-पांच पतियों की पत्नी बताने का अपराध किया है, वह पतिव्रता, विदुषी, पराक्रमी, चिन्तक, बुद्धिमान तथा एक आदर्श महिला थी। कुन्ती उसे आशीर्वाद देते हुए कहती (१९८-५, ६, ७) है कि जैसे इद्राणी इन्द्र में, स्वाहा अग्नि में, रोहिणी चन्द्रमा में, दमयन्ती नल में, भद्रा कुबेर में, अरुन्धती वसिष्ठ में तथा लक्ष्मी नारायण में भक्ति और प्रेम रखती है, वैसे तू भी अपने पति में अनुरक्त रह। भद्रे ! तुम सदा सुखी, दीर्घजीवी, वीर-पुत्रों वाली, सौभाग्यशालीनी, भोग-सामग्री से सम्पन्न, पति के साथ यज्ञ में बैठने वाली तथा पतिव्रता होओ.... इस आशीर्वाद में हमें द्रौपदी जैसी अनुपम एवं आदर्श महिला का दिग्दर्शन होता है ... वह भरी सभा में भीष्मादि विद्वानों तथा योद्धाओं से अनेक प्रश्न करके उन्हें निरुत्तर कर देती है... अपने अपमान का प्रतिशोध लेने के लिए वह धरती पर शयन करने और अपने बाल खुले छोड़ने की प्रतिज्ञा लेती है.... श्रीकृष्ण जब सन्धि-प्रस्ताव लेकर जाते हैं तो उन्हें युद्ध की घोषणा करके आने की प्रेरणा देती है... वही एक तेजस्वनि देवी है जो युधिष्ठिर जैसे शान्त तथा सौम्य-पुरुष को भी अग्निपुंज बना देती है ... ऐसी अनुपम व अद्वितीया देवी को लांछित करना घोर अपराध है .... आज भी बड़े-बड़े तथाकथित वक्ता तक इस निराधार बात को लेकर द्रौपदी को कोसते रहते हैं कि उसी के यह कहने पर कि अन्धों के अन्धे ही पैदा होते हैं, महाभारत का युद्ध हुआ... जबकि द्रौपदी ने यह बात कही ही नहीं है ...।

पता - महादेव, सुन्दरनगर, जिला-मण्डी, हिमाचलप्रदेश-१७५०१९)

विवेचनात्मक

‘संसार की समस्याओं का कारण मत–मतान्तरों की अविद्याजन्य मान्यताएँ’

– मनमोहन कुमार आर्य,

आज का आधुनिक संसार अनेक प्रकार की समस्याओं से पीड़ित व ग्रसित है। इनके हल के लिए संसार के विभिन्न देशों में सरकारें, विभाग, कार्यालय व अन्य सहयोगी संस्थाओं सहित विश्व स्तरीय संगठन संयुक्त राष्ट्र है परन्तु फिर भी समस्यायें हल होने के स्थान पर दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही हैं। विश्व में कई स्थानों पर युद्ध चल रहे हैं व अनेकों जगह युद्ध जैसे हालात हैं। संसार के मनुष्य समस्याओं से घिरे हुए हैं। यदि इन समस्याओं का मूल कारण देखा जाये तो प्रमुख कारण संसार के अविद्याजन्य मत–मतान्तर निर्धारित होते हैं। यदि यह मत–मतान्तर न होते तो क्या देश व विश्व में आज वह समस्यायें होती जो कि आज हैं? कदापि नहीं। मनुष्यों की कुछ समस्यायें हो सकती थी जिन्हें प्रेम, सद्भाव से वा सभी देश धर्म भावना से मिल कर हल कर लेते। यदि कोई सहयोग न करता जैसा कि रामायण काल व महाभारत काल में रावण व कौरवों ने किया था, तो सामूहिक रूप से युद्ध द्वारा उस देश को दण्डित करके उसे सत्य मार्ग को अपनाने पर विवश किया जा सकता था।

मत–मतान्तर विश्व के देशों के लोगों को आपस में बांट कर रखते हैं जिनसे व जिसमें सत्य दब जाता है। सत्य के तिरोहित होने से मनुष्यों के सुख भी तिरोहित हो जाते हैं क्योंकि सुख, शान्ति व कल्याण का आधार धर्म, सत्य व परहित आदि कार्य ही हुआ करते हैं। मत–मतान्तरों में जैसा आजकल देखने को मिल रहा है, उन मतों के प्रवर्तक महोदयों ने जो बातें मध्यकाल अर्थात् अविद्या के काल में कह दी अथवा उनके अनुयायियों ने समझने में भूल कर अनुकूल व प्रतिकूल लिख दी, उसी को उस समुदाय का धर्म व मत मान लिया गया व आज भी माना जा रहा है। अपने मत–धर्म प्रवर्त्तक के उस विचार, मत या मान्यता पर उनके अनुयायियों को विचार कर सुधार करने की स्वतन्त्रता वा अधिकार नहीं होता जिससे उन–उन मतों के ज्ञान व विज्ञान से रहित कुछ या बहुत से विचार व मान्यतायें सृष्टि के प्रलय काल तक के लिए सत्य न होकर भी अधिक महत्वूपर्ण बन गयीं हैं। मध्य –अज्ञान – कालीन मतों व धर्मों के बाहर भी बहुत कुछ ज्ञान है, उदाहरण के लिए वैदिक ज्ञान, सन्ध्या, यज्ञ–अग्निहोत्र, यौगिक जीवन आदि, जिसे जानने व समझने का प्रयास ही नहीं किया जाता। सभी मत व उनके अनुयायी इस विचार से सन्तुष्ट हैं कि उनके मत में कहीं कोई अपूर्णता नहीं है और उन्होंने किसी अन्य से कोई श्रेष्ठ व उपयोगी बात भी सीखनी नहीं है। कोई भी मत अपने मत के वैज्ञानिक व अन्य विषयों के विद्वानों को उन विचारों के विपरीत बोलने व अपने विचार व्यक्त करने की स्वतन्त्रता नहीं देता। इससे वृहत मनुष्य समाज ज्ञान व विज्ञान द्वारा भविष्य में उन मतों व उसके अनुयायियों के सुधार व सुधारों से होने वाले लाभ से वंचित हो रहा है।

हम भारत के सन्दर्भ में ही विचार करते हैं। यदि हमारे देश में अनेक पौराणिक व इतर मत न होते तो हमारे लोग अज्ञान, अन्धविश्वासों, दलितों व मातृ–शक्ति स्त्रियों के प्रति अस्पर्शयता, शोषण और अन्याय आदि सामाजिक बुराईयों में न फंसते और तब वह अवश्य ही ज्ञान व विज्ञान की बातें करते और जिन विषयों का वैज्ञानिक व ज्ञानियों ने अट्ठारहवीं शती व उसके बाद अन्वेषण व अनुसंधान किया है, वह हमारे देश के लोग भारतवासी ही मध्यकाल व

उससे पूर्व भी कर सकते थे। परन्तु पौराणिक मत व उसके कर्मकाण्डों के कारण यह न हो सका। क्या हुआ? कि महाभारत काल के बाद व मध्यकाल में लोग धार्मिक अन्धविश्वासों से ग्रसित हो गये और जो बुद्धि की उन्नति व विकास के कार्य उन्हें करने थे, वह सब धर्म विषयक अन्धविश्वासों की बलि चढ़ गये। आज भी वही धारा बह रही है जिसका कोई विरोध नहीं कर सकता। इन विपरीत परिस्थितियों में महर्षि दयानन्द सरस्वती (1825–1883) ने धार्मिक व सामाजिक अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखण्ड, ढ़ोग, कुशिक्षा व दैनिक मिथ्या कर्मकाण्ड सहित सामाजिक असामनता का ज्ञान, तर्क व युक्ति सहित और वेद तथा वैदिक प्रमाणों से जो प्रकाश, प्रचार व खण्डन–मण्डन आदि किया, उसका बहुत सीमित प्रभाव हुआ जिस कारण आज भी देश में बड़ी संख्या में मत–मतान्तर बने हुए हैं। इन मत–मताननतरों से देश में ज्ञान व विज्ञान की उन्नति व सामाजिक समानता तथा सबका सन्तुलित विकास नहीं हो पा रहा है और इस स्थिति के रहते हुए कभी सम्भव होता भी नहीं दीखता है।

सभी मत–मतान्तरों में अज्ञान व अज्ञानमूलक मान्यतायें विद्यमान हैं जिससे समाज का अहित होता है। कुछ मत–मतान्तरों में दूसरे मत के लोगों का येन केन प्रकारेण धर्मान्तरण करने की हानिकारक प्रवषत्ति भी विद्यमान है। **लोगों को असत्य को छोड़कर सत्य को तो अवश्य ही स्वीकार करना चाहिये परन्तु एक असत्य मत को छोड़कर दूसरे असत्य मत में ही चले जाना कोई बुद्धिमत्ता व विवेकपूर्ण कार्य नहीं है।** विगत अनेक शताब्दियों से यही होता आ रहा है और आज भी इस पर अंकुश नहीं लगा है। अनेक मत–मतान्तरों में यह भावना व प्रवषत्ति पहले की तुलना में कहीं अधिक मात्रा में विद्यमान है और यह कार्य देश के अनेक भागों में गुप–चुप रीति से होता भी रहता है जिसमें अनेक वोट बैंक और पक्षपातयुक्त विचारधारा के कारण राजनैतिक दलों की भी मौन स्वीकषति होती हैं। इन कारणों से समाज में एकरसता व एकरूपता उत्पन्न नहीं हो पाती। यदि ऐसा न होता तो सभी मनुष्य एक साथ रहकर एक दूसरे के सुख–दुख बांटते और सबकी समस्यायें परस्पर के सहयोग व सद्भावना से ही हल हो जाती। इसका एक ही समाधान है कि सभी मत अपने अपने सिद्धान्तों व मान्यताओं पर स्वयं ही सुधार की दषष्टि को सामने रखकर विचार करें और जहां मनुष्य के हित में जो सुधार आवश्यक हो, वहां पुराना नियम संशोधित कर नया नियम बनाया जाये। इसमें सहायता के लिए वेद की शरण ली जा सकती है। वेद किसी मत–सम्प्रदाय–पंथ व समुदाय के लोगों के ग्रन्थ नहीं है। सषष्टि के आरम्भ में ईश्वर से वेदों का ज्ञान मिलने के कारण यह मनुष्यमात्र की साझी सम्पत्ति है जिसे सम्प्रदायवादी ने अपने अज्ञान व स्वार्थ के कारण केवल हिन्दूओं व आर्यों की सम्पत्ति मान लिया है। यह तथ्य है कि वेदों व वैदिक साहित्य पर भारत के आर्यों व हिन्दुओं सहित भारत के सभी मत–पन्थों व विश्व के भी सभी मनुष्यों का समान अधिकार है।

हमने जो विचार प्रस्तुत किये हैं कुछ इसी प्रकार के विचार महर्षि दयानन्द व उनके गुरु स्वामी विरजानन्द जी के थे। उन्हें सभी मानवीय समस्याओं का समाधान भी सुलभ था और वह यही था कि सभी लोग वेद को अपना प्रमुख धर्मग्रन्थ स्वीकार करें जिससे समाज में एकमत होने से परस्पर प्रेम, सौर्हाद्र, सुख, शान्ति, समानता, सत्य का ग्रहण व असत्य का त्याग, अविद्या का नाश व विद्या की वृद्धि की प्रवृति विकसित हो। महर्षि दयानन्द ने इसी कारण से अपना पूरा जीवन सत्य धर्म के प्रचार अर्थात् वेद प्रचार को समर्पित किया और देश व विश्व के सभी मनुष्यों के मार्गदर्शन के लिए सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय सहित वेद भाष्य आदि अनेकानेक ग्रन्थों की रचना की। महर्षि दयानन्द की ज्ञान–विज्ञान युक्त मान्यताओं व वैदिक सिद्धान्तों का सीमित प्रभाव ही हुआ। देश में अनेक लोगों ने वेदमार्ग पर चलना आरम्भ किया और अब भी चल रहे हैं। कुछ लोगों के अपने–अपने

मतों से आर्थिक स्वार्थ जुड़े थे, उन्होंने महर्षि की बातों को सुना और मौन रहे, प्रतिवाद की सामर्थ्य उनमें नहीं थी। यदि किसी ने प्रतिवाद करने का प्रयास किया तो वह पराजित होकर दूर हो गया। आर्थिक स्वार्थ, लोभ व प्रतिष्ठा आदि से ऊपर उठने की शक्ति व मनोबल उनमें नहीं था। उन्होंने महर्षि दयानन्द की विचारधारा की स्वीकृति मौन रहकर व दूसरों से चर्चा कर दी। इन्हीं लोगों ने अपने अल्पज्ञानी व अज्ञानी शिष्यों को गुमराह कर सत्य को स्वीकार नहीं करने दिया जिससे संसार में नाना प्रकार की समस्यायें उत्पन्न हो गई हैं।

जिस प्रकार पिता के मार्गदर्शन की अवहेलना कर पुत्र व सन्तानें किंवा परिवार उन्नति नहीं कर सकता, इसी प्रकार से ईश्वर की वेदरूपी आज्ञा की अवहेलना व तिरस्कार कर देश व विश्व का कल्याण नहीं हो सकता। अतः विश्व को शान्ति का धाम बनाने व सभी समस्याओं पर विजय पाने के लिए सब मनुष्यों को सत्य की शरण में जाना ही होगा। इसी से हमारा अभ्युदय व निःश्रेयस सिद्ध होगा। अन्य कोई मार्ग है ही नहीं। यदि हम इसकी अवहेलना व उपेक्षा करेंगे तो हमारा परजन्म वा भावी जन्म उन्नत होने के स्थान पर अवनति को प्राप्त होगा। सत्य व उसका विपरीत मार्ग चुनने का अधिकार ईश्वर ने मनुष्यों को प्रदान किया है। विवेकशील मनुष्य सत्य का अनुसरण करते हैं और अज्ञानी अज्ञान के कारण मार्ग चुनने में गलती करते हैं। ज्ञानी मनुष्य की परीक्षा वेद के ज्ञान को आत्मसात कर उसके अनुसार कर्म करने से होती है। इतर अज्ञानी तो अहंकार का ही प्रतीक हैं।

महर्षि दयानन्द जी सहित महापुरुषों श्री राम, श्री कृष्ण, महर्षि बाल्मिकी, वेदव्यास जी, महर्षि अरविन्द, स्वामी श्रद्धान्नद जी व पं. गुरुदत्त विद्यार्थी आदि के जीवन चरित पढ़कर आदर्श व परमार्थ प्रदान कराने वाली जीवन पद्धति को जाना व समझा जा सकता है। इससे पता चल सकता है कि इन महापुरुषों का मार्ग सही था या नहीं? यदि सभी मतों के विद्वान अपने मतों की पुस्तकों सहित वेद व वैदिक साहित्य का भी श्रद्धापूर्वक अध्ययन करें तो वह सत्य को अवश्य प्राप्त हो सकते हैं जिससे विश्व का कल्याण हो सकता है। इसी के साथ इस लेख को विराम देते हैं।

पताः 196 चुक्खूवाला–2, देहरादून–248001

मानवता की सुगन्ध

मानवता की है मंजुल
सुगन्ध जिस मन में,
सच्चा मानव वही
श्रेष्ठ है वह जीवन में।
जो औरों को सुख दे
दुःख का बने न कारण,
जन–साधारण की
पीड़ा का करे निवारण,
स्वार्थ–भाव हो गौण,
ध्येय जिसका पर–हित हो,
औरों का उपकार
सोचता जिसका चित्त हो,
निज उन्नति के लिए
न औरों का पग खींचे,
जो समाज को निज जीवन
के जल से सींचे,
अपने साथ दूसरों को भी
उन्नति–पथ पर,
जो आगे ले जावे,
जग में श्रेष्ठ वही नर,
डगमग दुनिया टिकी
मनुजता के ही बल पर,
निर्भर सुखद भविष्य विश्व का
स्वर्णिम कल पर।।

रचयिता - चन्द्रपालसिंह यादव 'मयंक'

आओ संसार को श्रेष्ठ बनाएँ

- डॉ. बिजेन्द्रपाल सिंह

महर्षि दयानन्द सरस्वती महाराज ने आर्यसमाज के छठे नियम में कहा कि "आर्यसमाज का उद्देश्य संसार का उपकार करना है अर्थात् शारीरिक आत्मिक व सामाजिक उन्नति करना" अर्थात् संसार के लोगों का स्वास्थ्य अच्छा हो आत्मिक रुप से उन्नति करें मन से बुराईयों को त्यागें अन्धविश्वास व कुरीतियों को छोड़े, ईर्ष्या, द्वेष एवं अभिमान न हो समाज चहुँ ओर उन्नति करे वर्ण व्यवस्था आश्रम व्यवस्था सुदृढ़ हो, सभी वेदानुसार चले आपस में प्रीति से रहें तो **सर्वे भवन्तु सुखिनः** का प्रयोजन फलीभूत होगा।

मनुष्य मात्र के हित कल्याण, सुख, समृद्धि और उन्नति के उद्देश्य से महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज की स्थापना की व संसार की उन्नति हेतु वेदप्रचार किया। ऋषि ने ऋग्वेदादि भाष्य के अनेक मंत्रों के अर्थ को प्रतिपादित करते हुए बताया कि "वे ही आर्य है कि जो उत्तम विद्यादि के प्रचार से सबके उत्तम भोग की सिद्धि और अधर्मी दुष्टों के निवारण के लिए निरन्तर यत्न करते हैं।" महर्षि ने आर्य का अर्थ- "धर्मयुक्त गुण कर्म स्वभाव वाले उत्तम गुण कर्म स्वभाव युक्त, उत्तम जन और समस्त गुण कर्म और स्वभावों में वर्तमान रहना बताया है।"

ईसाई, इस्लाम, जैन, बौद्ध आदि की भांति आर्य किसी जाति वर्ग सम्प्रदाय के अनुयायी नहीं है जो श्रेष्ठ स्वभाव, धर्मात्मा, परोपकारी सत्य विद्यादि गुण युक्त और आर्यावर्त देश में सब दिन से रहने वाले है उनके आर्य कहते हैं।

वैदिक धर्म की मान्यताएँ समस्त मानव जाति के लिए है -

१. वैदिक धर्म का पूरा नाम सत्य सनातन वैदिक धर्म है जो अत्यन्त प्राचीन है जिसके अनुसार चारों वर्ण जन्म से न होकर गुण कर्म स्वभाव से होते हैं तथा मनुष्य का जीवन चार आश्रमों, ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थ एवं सन्यासाश्रम में व्यवस्थित है समय-समय पर संस्कार करने होते हैं, जिसकी संख्या सोलह है।

२. ऋषि के अनुसार विश्व की सर्वोच्च शक्ति ईश्वर है जो एक है मुख्य नाम ओ३म् है यही सर्वश्रेष्ठ नाम है वेदों में इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, वायु आदि एक ईश्वर के ही नाम है सृष्टि का पालन कर्ता संहर्ता एक ईश्वह ही है।

३. महर्षि के अनुसार जब ईश्वर निराकार है वह जन्म ही नहीं लेता न मृत्यु होती तो उसकी मूर्ति कहां से आई। यजुर्वेद (३२/३) का मंत्र है **न तस्य प्रतिमा अस्ति**। अर्थात् मूर्ति पूजा वेदा विरुद्ध है।

४. वेदानुसार महर्षि ने सृष्टि में तीन सत्ताएँ या तत्व माने हैं, जो अनादि है वह ईश्वर, जीव व प्रकृति है यह वेदानुकूल है।

५. छह दर्शन है जो वेदों को स्वतः प्रमाण मानने वाले हैं, वह हैं सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मांमांसा व वेदांत।

६. ऋषि दयानन्द ने कहा है कि चारों वेदों को विर्भ्रान्त स्वतः प्रमाण मानता हूं वे स्वयं प्रमाण स्वरुप है, जिनके प्रमाण होने में किसी अन्य ग्रन्थ की अपेक्षा नहीं जैसे सूर्पवा प्रदीप अपने स्वरुप के स्वतः प्रकाश और प्रथिव्यादि के भी प्रकाशक होते हैं वैसे चारो वेद हैं। वेद ईश्वर कृत है।

७. ऋषि ने ईश्वर के समान जीव को भी अनादि तथा नित्य माना है जीव और ईश्वर स्वरुप और वैधर्म्य से भिन्न और व्याप्य व्यापक और साधर्म्य से अभिन्न है ..।

ऋषि के अनुसार पुनर्जन्म होता है प्रत्येक प्राणी अपने अपने अच्छे बुरे कर्मों का फल भोगता है जीवात्मा अनादि नित्य व अमर है।

८. ऋषि ने माना है कि स्त्रियों की स्थिति पुरुषों के समान होनी चाहिए। ऋषि के अनुसार देखा आर्यावर्त्त के राजपुरुषों की स्त्रियां धनुर्वेद अर्थात् युद्ध विद्या भी अच्छे प्रकार से जानती थी...। गार्गी, मैत्रेयी, मदालसा आदि विद्वान स्त्रियाँ थी। वेद के अनुसार चल कर ही संसार को श्रेष्ठ निर्माण कर सकते हैं ऋषि ने वेद को विश्व के लिए सर्वश्रेष्ठ माना है। हमें ऋषि के मन्तव्यों का प्रकाश निरन्तर करते रहना चाहिए।

पता : चन्द्रलोक कालोनी, खुर्जा

ऐतिहासिक घटनाएँ जिन्होंने मुंशीराम को विचलित किया

– कु. आभा शर्मा,

क्रातिकारी विचारों वाले निष्ठावान आर्यसमाजी मुंशीरामजी का जन्म सन 1856 को पंजाब प्रांत के तलवन नगरी में हुआ था। इनके पिता लाला नानकचन्दजी कर्मकांड़ी शिवभक्त थे तथा माताजी धार्मिक प्रवष्ति की महिला थी। धर्मपरायण माता पिता के धार्मिक विचारों का प्रभाव बालक मुंशीराम पर भी पड़ा। मातापिता के साथ मुंशीराम भी पूजापाठ में ध्यान लगाते थे। यह आर्य धर्म प्रचार का दौर था ऋषि दयानंद घूमघूम कर मूर्तिपूजा व धार्मिक संस्कारों पर कुठाराघात कर रहे थे तथा निराकार ईश्वर का प्रचार कर रहे थे। जब मुंशीरामजी के शहर में ऋषि दयानंद का आगमन हुआ तो इनकी माताजी ने अपने बच्चों का घर से निकलना इसलिए बंद करवा दिया कि कहीं बच्चे बिगड़ न जाए। जिस बालक नें बडा होकर आर्य समाज का उत्थान किया माताजी ने बाल्यकाल में उसे दयानंद के प्रभाव से दूर रखने की कोशिश की थी। किंतु नियति को कुछ और ही मंजूर था। बालक मुंशीराम के जीवन में कुछ ऐसी घटनाएँ घटी जिनसे मुंशीराम का मन विचलित हो गया और वे मूर्तिपूजा और धार्मिक पाखण्ड के विरोध में खड़े हो गए।

मुंशीराम के पिता नानकचंद एक बार सपरिवार चित्रकूट की यात्रा पर आए थे। उस समय चित्रकूट में राम, लक्ष्मण और सीता की कुटिया सुरक्षित थीं। चित्रकूट में यति नामक पहाड़ी है जिसे स्थानीय पंडों ने लक्ष्मणजी की आखेट स्थली बताया था और इसके प्रमाण स्वरूप चट्टानों पर कुछ निशान दिखाए इसे लक्ष्मण के तीरों के निशान बताया। चट्टानों पर बने ये निशान नीचे की ओर गए थे। मुंशीराम को पंड़ों के इस कथन पर विश्वास नहीं हुआ। कुछ दिनों बाद जब अंग्रेजों ने उस चट्टान की खुदाई करवाई तो वहाँ कुछ भी न निकला। इस घटना नें मुंशीराम के धार्मिक मन पर प्रथम आघात किया।

विंध्यवासिनी के मेले में घटी एक घटना नें मुंशीराम को एक नई दिशा दी। मेले में एक स्थान पर एक ब्राह्मण का भोजन पक रहा था। एक नौकर ने चूल्हे से आग निकाल ली । जिस पर ब्राह्मण देवता कुपित हो गए उन्होंने भोजन को लात मार दी और नौकर को काफी भलाबुरा कहा। ब्राह्मण के अनुसार नौकर के इस कार्य से उनका धर्म भ्रष्ट हो गया था। इसी प्रकार की एक अन्य घटना जोखू मिश्र के साथ घटी। जोखू मिश्र का भोजन चूल्हे पर पक रहा था। किसी व्यक्ति ने चिमटे से उस चूल्हे की थोड़ी सी आग निकाल ली इस पर जोखू मिश्र ने बहुत बावेला मचाया कि उसका धर्म भ्रष्ट हो गया। जोखू मिश्र गांजा, शराब, तम्बाखू जैसी नशीली चीजों का सेवन करते थे। इन कर्मों से उसके धर्म को कोई हानि नहीं होती थी किंतु चिमटे से आग निकालने पर धर्म भ्रष्ट हो गया। यह सुनकर मुंशीरामजी को धर्म नाम से चिढ़ होने लगी। वे सोचने लगे क्या धर्म इतना हल्का होता है कि व्यक्ति के स्पर्श मात्र से नष्ट हो रहा है।

बनारस में घटी एक घटना नें मुंशीराम के मन में अंधविश्वास और पाखण्ड के प्रति घष्णा को और बढा दिया। गंगा किनारे सोधिया घाट नामक निर्जन स्थान में बनी गुफा में एक नागा साधु रहा करता था। उसका एक विचित्र नियम था। वह साधु उसी का भोजन स्वीकार करता था जो सबसे पहले भोजन लेकर आता बाकी लाने वालों को डांटकर भगा देता। एक दिन मुंशीराम सुबह सुबह अपने नौकर के साथ घाट की ओर घूमने निकले। गुफा के करीब पहुँचने पर उन्हें एक स्त्री की चीख सुनाई दी। मुंशीराम दौड़कर गुफा के पास पहुँचे तो देखा कि एक स्त्री ने दोनों हाथों से गुफा के द्वार को पकड़ रखा है और चीख रही है। नागा साधु उसे भीतर की ओर खींच रहा था। मुंशीराम और उनके नौकर ने साधु को ड़रा धमकाकर बड़ी मुश्किल से उस महिला को छुडाया। इस खींचतान और ड़र की वजह से वह स्त्री मूर्छित हो गई थी। तभी एक अधेड़ महिला सामने आई उसने अपना शाल मुर्छित महिला पर ड़ाल दिया। मुंशीराम

उस अधेड़ महिला को पहचान गए वह उनके घर के पास रहने वाले खत्री परिवार की महिला थी। वह अपनी निःसंतान देवरानी को साधु के पास सबसे पहले इसलिए लेकर आई थी कि साघु के आशीर्वाद से उसकी देवरानी को भी संतान की प्राप्ति हो जाएगी।

एक घटना काशी विश्वनाथ मंदिर की है। प्रातःकाल उठना, गंगा किनारे व्यायाम और स्नान करके भगवान के दर्शन को जाना उनका नित्य कर्म था। एक दिन मुंशीरामजी को विश्वनाथ जी के मंदिर में दर्शन हेतु जाने में देर हो गई नियम के पक्के होने की वजह से वे देर हो जाने पर भी सीधे विश्वनाथ मंदिर जा पहुँचे। पर द्वारपाल ने उन्हें भीतर जाने से रोक दिया कारण उस वक्त काशी नरेश की महारानी विश्वनाथ की पूजा कर रहीं थी। इस समय किसी और का मंदिर में प्रवेश वर्जित था। भगवान के मंदिर में इस प्रकार का भेदभाव देखकर मुंशीराम अंध श्रद्धा पर क्रोधित हो गए। नतीजा यह हुआ कि मूर्तिपूजा के प्रति उनके मन में विद्रोह की भावना जाग उठी।

मंदिरों से विरक्ति के परिणाम स्वरूप उनका झुकाव अन्य धर्मों की ओर होने लगा। उनकी भेंट बनारस के रोमन कैथोलिक पादरी लीफू से हुई। पादरी लीफू के साथ मुंशीराम के तर्क वितर्क और विचार विमर्श हुआ करते थे। लीफू की विनयशीलता और सद्व्यवहार से मुंशीराम प्रभावित हो गए और उनके घर जाने आने लगे। एक दिन जब मुंशीराम लीफू के घर गए दरवाजा खुला देख वे निःसंकोच भीतर चले गए। लीफू महाशय घरपर नहीं थे । मुंशीराम ने भीतर किसी और पादरी को एक नन के साथ कामक्रीड़ारत पाया। नन जो आजीवन कुँवारी रहकर ब्रह्मचर्य का पालन करती हैं और पादरी जो फादर कहे जाते हैं । इस दुखद घटना से मुंशीराम के मन में ईसाई धर्म के प्रति बनी श्रद्धा और आकर्षण जाता रहा। मथुरा के गोपाल मंदिर में भी एक गुसाइ की ऐसी ही नीच हरकत देखकर उनका मन पंड़े, पुजारियों, साधुओं एवं पादरियों से खिन्न हो गया।

अब तक अपने जीवन में मिले अनुभवों से मुंशीराम की धार्मिक भावनाओं व आस्था को गहरा आघात पहुँचा था। प्रयाग में घटी एक घटना ने उन्हें एक भिन्न दिशा दी। मुंशीराम को पता चला कि गंगा किनारे झूसी के समीप वन में एक ऐसे महात्मा रहते हैं जिनके वश में शेर है। मुंशीराम अपने मित्र को साथ लेकर उस महात्मा से मिलने चल पडे। सुनसान जंगल के बीच एक महात्मा को समाधि लगाए देखा। वे दोनो छुपकर इंतजार करने लगे। रात्रि के तृतीय प्रहर उन्होंने शेर की गर्जना सुनी। शेर चलता हुआ सीधा महात्मा के पास आया और महात्मा के पैर चाटने लगा। तब महात्मा की समाधि भंग हुई वे कुछ देर शेर का सिर स्नेहपूर्वक थपथपाते रहे फिर उन्होने शेर को जाने को कहा। महात्मा की आज्ञा सुन शेर जंगल में वापस चला गया। मुंशीराम और उनके मित्र यह देखकर बड़े प्रभावित हुए। उन्होंने जाकर अपना सिर महात्मा के चरणों में रख दिया और शेर का राज पूछा। तब महात्मा ने बताया कि इस शेर को किसी शिकारी की गोली लगी थी यह घायल तड़प रहा था तब मैंने इसकी सेवा सुश्रुषा की थी घाव पर औषधि लगाई थी उसे जल लाकर पिलाया था। शेर को जब तक दर्द से छुटकारा न मिल गया वह कृतज्ञतावश मेरे पैरो को चाटता रहा। मैं प्रतिदिन उसके घाव पर जंगल से औषधि लाकर लगाता रहा। शेर अपनी कृतज्ञता की आदत नहीं भूला है। शेर का व्यवहार कोई चमत्कार नहीं है बल्कि सेवा, परोपकार और अहिंसा का फल है।

इस महात्मा से मुंशीराम को यह शिक्षा मिली कि जीव सेवा ही मानवता का सच्चा धर्म है। दीन दुखियों, निर्बल और असहायो की सेवा से बड़ा और कोई धर्म नहीं है। इसी प्रेरणा के चलते मुंशीराम आगे चलकर महात्मा मुंशीराम और स्वामी श्रद्धानंद बने।

पता. डीएवी पब्लिक स्कूल एसईसीएल छाल

– सुविचार –

वह व्यक्ति कभी सुखी नहीं हो सकता जो यह नहीं जानता कि वह चाहता क्या है ?

- सिगमंड फ्रायड (प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक)

जिंदगी में अच्छे लोगों की तलाश मत करो, खुद अच्छे बन जाओ। आपसे मिलकर शायद किसी की तलाश पूरी हो जाए।

आर्ष चिन्तन

शतपथ ब्राह्मण में अग्निहोत्र का विवेचन

- डॉ. भवानीलाल भारतीय

यज्ञ की भावना का मूल वेदों में देखा जा सकता है । यजुर्वेद के अनुसार- यज्ञ रूपी परमात्मा का यजन-पूजन यज्ञ के द्वारा किया जाता है। भौतिक अग्निहोत्र की विधि का निर्माण भी वेद मंत्रों को यथा स्थान, यथा क्रिया में विनियुक्तकर ही किया गया। अग्न्याधाप के मंत्र ऋषि दयानन्द ने यजुर्वेद के तृतीय अध्यायन से लिए हैं। तथापि यज्ञ नैतिक मूल्यों का बाल्य प्रतीक ही है। सत्य और श्रद्धा वे मौलिक तत्त्व हैं जो यज्ञ के विधान में निहित हैं। इस आशय की एक आख्यायिका शतपथ ब्राह्मण में आती है। ध्यान रहे कि ब्राह्मण तथा उपनिषदों में आये उपास्थान (आख्यायिकाएं) ऐतिहासिक भी हैं तो कुछ रुपकात्मक तथा प्रतीकात्मक है । विदेह जनक से जुड़े आख्यानों को ऐतिहासिक माना जाता है। अधिकांश में ये राजा तथा ऋषियों के संवाद रुप में है।

एक ऐसे ही आख्यान का आरम्भ जनकवैदेह विदेह देश का राजा तथा ऋषि याज्ञवल्क्य के संवाद रुप में शतपथ (११/३/१/२/४) में आया है। यह संवाद मूल तथा अर्थ सहित यहां दिया जा रहा है -

तद्वैतजनको वैदेहो याज्ञवल्क्यं पप्रच्छ ।

वेत्थाग्निहोत्रं याज्ञवल्क्य इति ।

हे याज्ञवल्क्य, क्या तुम अग्निहोत्र को जानते हो। याज्ञवल्क्य का उत्तर था - वेद सम्राडिति - हे सम्राट मैं जानता हूँ। जनक किमिति - वह अग्निहोत्र क्या है। किस पदार्थ से किया जाता हैं ? उत्तर - पयएवेति ।

अर्थात् - एक शब्द में कहें तो पय (दुग्ध) तथा उससे निकला घृत ही अग्निहोत्र का मुख्य साधन है।

*जनक का प्रतिप्रश्न - **यत् पयो न स्यात् केन जुहुया इति।***

यदि दुग्ध (या घृत) न मिले तो कैसे अग्निहोत्र करें ?

*उत्तर में ऋषि ने कहा - **व्रीहियवाभ्याम्मिति ।***

उस स्थिति में चावल और जौ से यज्ञ करना चाहिए।

*इस पर राजा ने फिर पूछा - **यद् व्रीहियवौ न स्यातां केन जुहुया इति ।***

मान लें कि चावल और जौ नहीं है तो यज्ञ कैसे करें ?

*उत्तर में ऋषि ने कहा - **या अन्या ओषधय इति ।***

जो अन्य औषधियां मिले, उनसे अग्निहोत्र करें।

*पुनः जनक का प्रश्न - **यदन्या ओषधयो न स्युः केन जुहुया इति ।***

ऐसी अन्य औषधियाँ भी सुलभ न हों तो हवन कैसे करें ?

*ऋषि ने कहा - **या आरण्या ओषधय इति ।***

जंगल में मिलने वाली औषधियों से यज्ञ करें।

*जनक ने पुनः पूछा - **यदारण्या ओषधयो न स्युः केन जुहुया इति ।***

यदि ये जंगली औषधियां भी न मिलें तो यज्ञ किससे करें ?

*उत्तर में ऋषि का कथन था - **वानस्पत्येन ।***

उस स्थिति में बट, पीपल, शमी आदि वृक्षों की समिधाओं के द्वारा यज्ञ करें। जंगल में ये प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है।

*जनक का अगला प्रश्न था - **यद्वानस्पत्यं न स्यात् केन जुहुया इति ।***

मानलो कि किसी देश (यथा मरुस्थल) में वृक्षों के न होने से समिधाएं भी उपलब्ध न हों तो यज्ञ कैसे होगा ?

*प्रत्युत्पनमति ऋषि का उत्तर था - **अद्भिरिति ।***

इस स्थिति में जल से यज्ञ करो । अर्थात् मंत्रोच्चारण पूर्वक पात्र से जल लेकर उसे अन्य पात्र में मंत्रोच्चारण पूर्वक छोड़ें। जनक की प्रश्नावली खत्म होने वाली नहीं थी। उसने कहा **यद् उदकानि न स्युः केन जुहुया इति ।**

मान लो किसी देश में जल भी न मिले तो किससे यज्ञ करें ? ऋषि का उत्तर था - **"न वा इह तर्हि किं च नासीत अथैनदह्यतैव सत्यं श्रद्धायामिति"** यदि कुछ भी

नहीं उपलब्ध हो तो श्रद्धा की अग्नि प्रज्जवलित कर उसमें सत्य की आहुति देवें। अर्थात् यज्ञ का मूल भाव हृदय में श्रद्धा को उदीप्त करना तथा सत्य को धारण करना है। यदि याज्ञिक के मन और आचरण में सत्य और श्रद्धा (सत्य के प्रतिनिष्ठा) का भाव विद्यमान है तो यह समझ लेना चाहिए कि वह सच्चा याज्ञिक है। तथापि इसका आशय यह भी नहीं है कि अग्निहोत्र के लिए आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध होने पर भी हम इस नित्य कृत्य को न करें। अपवाद रुप में ही हमें घृत के अभाव में औषधियां, तदाभाव में जंगली वनस्पतियां, समिधाएं आदि से यज्ञ करना चाहिए। यज्ञ का न करना कथमपि उचित नहीं है। यज्ञ जिस 'यज्' धातु से निष्पान्न होता है उसमें देवपूजा, संगतिकरण तथा दान का भाव निहित है। विद्वानों का सत्कार, भौतिक देवों (जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी, आकाश) का यथायोग्य उपयोग एवं उनमें संगति स्थापन तथा अभावग्रस्त्रों को अन्न, धनादि तथा जिज्ञासु को विद्या दान करना यज्ञ भावना है। यही कारण है कि शतपथ ब्राह्मण ने यज्ञ को विष्णु स्वरुप कहा **यज्ञो वै विष्णुः** (सर्वव्यापक) तथा उसे श्रेष्ठतम कर्म बताया **यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म।**

पता - ३१५, शंकर कालोनी, श्रीगंगानगर.

लक्ष्य

वैराग्य का उदय

- लोचन आर्य

मानव जीवन का लक्ष्य परमात्मा है, उस परमात्मा को पाने के लिए,अष्टांगयोग के सीढ़ी पर आरूढ़ होता है। वैराग्य के भाव को जगाने के लिए। यह जगत् सदा चलायमान है, जो सदा चल रहा है, रुकता नहीं, क्योंकि इसको गति देने वाला कोई चेतन पदार्थ जो जगत् के एक-एक अणु पर विद्यमान है। जिससे यह जगत् उस ईश के कारण गतिमान हो रहा है। मनुष्य जब पूर्ण निश्चय कल लेता है, कि वह ईश संसार के अणु-अणु में विद्यमान है, किसी भी भौतिक पदार्थ का उपभोग त्यागपूर्वक करता है ताकि कोई दूसरा भी इसका उपभोग कर सके क्योंकि परमात्मा को अणु-अणु में देखने से फल यह मिलता है कि -

१. भौतिक पदार्थों के प्रति मेरापन का भाव समापन होता है, क्योंकि वह ईश सारे जगत् में बसा है, तो यहाँ का हर वस्तु उस ईश का है।
२. आत्मा में छल-कपट, काम, क्रोध, लोभ, अहंकार, मोह से बचा रहता है। और आत्मा वैराग्य के पथ पर आगे बढ़ता है।
३. बुद्धि को सूक्ष्म रूप से उसकी तरफ से ज्ञान मिलता रहता है जिससे बुद्धि ज्ञान से आनन्द में गोता लगाती रहती है।
४. अणु-अणु में ईश को विद्यमान देखता है तो मन, बुद्धि, वश में होता है।

इस तरह प्रकृति का ज्ञान जब होता है तब वैराग्य के भाव उदय होता है, तब उस ईश के भक्ति को करता हुआ संसार में निर्लेप होकर विचरण करता है। उपनिषद का ऋषि इस मंत्र में-

ओम् ईशावास्यमिदं सर्वं यत् किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद् धनम्॥

संसार वासी को ज्ञान दे रहा है। संसार का कोई भी भौतिक पदार्थ को त्यागपूर्वक उपभोग करे ताकि कोई दूसरा व्यक्ति भी इसका उपभोग कर सके। संसार के प्रति वैराग्य होता हुआ उस ईश को प्राप्त करना है जिससे यह मान का शरीर मिला है।

पता : आर्यनगर, दुर्ग (छ.ग.)

महर्षि दयानन्द के सिद्धान्त

ऋषि दयानन्द 'सत्य' को सर्वोपरि मानते थे। उनका दृढ़ विश्वास था कि - "जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं।"

२८ मई जन्मदिवस पर विशेष

क्रान्तिकारी सावरकर बन्धु

आत्मकथा :- **विनायक दामोदर सावरकर** (२८ मई १८८३-२६ फरवरी १९६३)

राजबन्दियों को अलग-अलग बैरकों में अकेले-अकेले रखा गया। उनकी परस्पर की बातचीत अब हथकड़ी या बेड़ी की सजा पाती। स्नान के हौदे पर या भोजन करते समय यदि कोई इशारे से भी कुशल-क्षेम पूछता देख लिया जाता तो सात-सात दिन दण्ड बेड़ी पहन खड़े रहने की सजा रसीद हो जाती। उन सुशिक्षित राजबन्दियों से अब छिलका कुटाई का काम लेना पक्षपात माना जाने लगा तथा उन्हें तेल का कोल्हू चलाने का काम सौंप दिया गया जो बैल के ही योग्य माना जाता है तथा जेल का सब से कठिनतम मशक्कत का कार्य माना जाता है।

सबेरे उठते ही लंगोटी पहनकर कमरे में बन्द हो जाना तथा अन्दर कोल्हू का डण्डा हाथ से घुमाते रहना। कोल्हू में नारियल की गरी के पड़ते ही वह इतना भारी चलने लगा जाता कि कसे हुए शरीर के बन्दी भी उसकी बीस फेरियाँ करते रोने लग जाते। बीस-बीस वर्ष तक की आयु के चोर-डाकुओं तक को इस भारी मशक्कत के काम से वंचित कर दिया जाता किन्तु राजबन्दी चाहे वह जिस आयु का हो, उसे यह कठिन व कष्टतर कार्य करने से अण्डमान का वैद्यक शास्त्र भी नहीं रोक पाता। कोल्हू के उस डण्डे को हाथों से उठाकर आधे रास्ते तक चला जाता और उसके बाद का अर्ध गोला पूरा करने के लिए डण्डे पर लटकना पड़ता क्योंकि हाथों में बल नहीं रहता था। तब कहीं कोल्हू की गोल दांडी पूरा चक्कर काटती।

बीस वर्ष तक की आयु के वे सब कोमल राजबन्दी कष्टों से अपरिचित परन्तु सुशिक्षित थे। सबेरे दस बजे तक लगातार कोल्हू के चक्कर लगाने से श्वास भारी हो जाती और प्रायः सभी को चक्कर आ जाता। कोई-कोई तो पसीने से लथपथ होकर बेहोश तक हो जाते। नियमानुसार दस बजे काम बन्द कर दिया जाता दो घण्टे के लिए। परन्तु कोल्हू का काम निरन्तर का था। भोजन आंते ही दरवाजा खुल पड़ता। बन्दीवान भात, रोटी व सब्जी लेकर, थाली भर लेता और

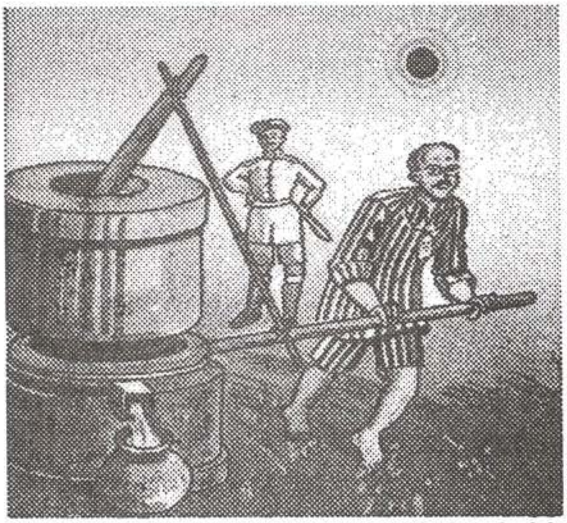

कालापानी अण्डमान की सेलूलर जेल में बैल की जगह घानी में जुते हुए, तेल पेरते हुए आजीवन कारावास के कैदी **स्वातंत्र्य वीर विनायक दामोदर जी सावरकर**

उसके अन्दर जाते ही दरवाजा बन्द कर लेता। यदि कोई बन्दी पसीने से तर शरीर को साफ करते रहने या हाथ-पैर धोते रहने के कारण एकाध मिनट विलम्ब कर देता तो जेल बार्डर उसे जोर-जोर से गन्दी माँ-बहन की गालियाँ देने लगता। जहां पीने के पानी के लिए आग्रह करना पड़ता वहां हाथ धोने के लिए पानी कहाँ से मिले ?

कोल्हू में काम करते-करते भीषण प्यास लगने लगती। पानी वाला पानी देने से इंकार कर देता। यदि किसी जेल कर्मचारी को तम्बाकू खिला दी तो पानी मिल जाता। जमादार से पानी के लिए कहा जाता तो उसका उत्तर होता - कैदी को दो कटोरी पानी देने का हुक्म है, तुम तो तीन पी गये और पानी क्या तुम्हारे बाप के घर से लायें ? पानी पीना या हाथ धोना जहाँ इतना दुश्वार था वहां स्नान के लिए पानी कहाँ ? भोजन परोसकर जमादार को कोठरी का दरवाजा बन्द करने के बाद यह चिन्ता न थी कि कैदी ने भोजन किया कि नहीं। बल्कि उसे यह चिन्ता रहती कि फिर से कैदी कोल्हू फिराने लगे कि नहीं ?

***आचार्य सत्यानन्द नैष्ठिक**, संचालक, गुरुकुल राजस्थान*

अनुरोध
जल ही जीवन है

ग्रीष्म ऋतु प्रारंभ होते ही पानी के लिये हा-हाकार चारों तरफ मचने लगता है। कुछ लोग सरकार को कोसते हैं और कुछ भगवान को। पर यह कोई नहीं कहता है कि इस स्थिति के जिम्मेदार कुछ हद तक हम स्वयं है। जैसे-जैसे शहरीकरण होता गया हमने अन्धाधुंध पेड़ों को काटना प्रारंभ कर दिया, अपने चारो तरफ क्रांकीट जंगल तैयार कर लिया।

धरती में पानी जाने के लिये जगह हमने छोड़ी ही नहीं। पीने के पानी की समस्या सबसे अधिक है। परन्तु कुछ सावधानियाँ बरतने पर पानी की समस्या का समाधान किया जा सकता है। इसके लिये हमें जागरुक होना आवश्यक है।

मकान बनाते समय अगर हम वाटर हारवेस्टिंग का प्लान तैयार करें तो कुछ हद तक आपके लिये पानी की समस्या का हल हो सकता है।

घर में हाथ धोते वक्त पानी नल से न लेकर मग में एकत्र पानी से हाथ धोवें।

0 शावर की जगह बाल्टी में पानी लेकर नहायें।

0 शौचालय इत्यादि में फलश की जगह बाल्टी से पानी डाले।

0 गमलों और बगीचे में पानी निस्तारी के पानी का उपयोग करें।

0 छोटे बच्चों को पीने का पानी छोटे ग्लासों में दें।

0 कूलर आदि का उपयोग करते वक्त कमरा ठण्डा होने पर वाटर पम्प बन्द करें।

0 घर में लगे नल इत्यादि बन्द रखें, आवश्यकता अनुसार उनका प्रयोग करें।

- श्रीमती किरण खोसला, स्मृतिनगर भिलाई

"पढ़ो मित्र सत्यार्थ प्रकाश"

अगर नाव डूबी तो डूबोगे सारे।
न तुम बचोगे न साथी तुम्हारे॥
रामायण, महाभारत पढ़ो देखो ग्रन्थ हजार।
बिन सत्यार्थ प्रकाश के जीवन है बेकार॥
कोटि-कोटि जनता की आश।
पढ़ो मित्र सत्यार्थ प्रकाश॥
सत्य धर्म की यदि हो आश।
पढ़ो मित्र सत्यार्थ प्रकाश॥
कुरान, पुराण, बाईबिल और अन्ध विश्वास।
इन सबको सुधारता है, सत्यार्थ प्रकाश॥
सौ मर्जों का एक इलाज,
पढ़ो मित्र सत्यार्थ प्रकाश॥

- तपोभूमि से संकलित

"भाई"

वह शराब, सिगरेट, तम्बाकू का सेवन करता था। कभी-कभी जुआ, सट्टा में हाथ आजमाता था। किन्तु अपनी बहिन के लिए वह एक ऐसा लड़का तलाश रहा था, जिसमें ये सारे दुर्गुण न हो। लड़का मिला भी उसे। उसने बहिन का विवाह कर दिया। जब उसके विवाह की बारी आई तो लड़की के भाई ने कहा क्या आप .... शराब, सिगरेट.... आदि पीते हैं। उसने सहज भाव से कहा, हाँ, ये मेरे शोक है और इससे साबित होता है कि मेरी आर्थिक स्थिति अच्छी है। लड़की के भाई ने उसे अपनी बहिन के लिए योग्य वर नहीं माना। इस तरह वह कई लड़की पक्ष द्वारा अस्वीकृत किया गया तो उसने गुस्से से जाति के लोगों को धिक्कारना आरम्भ कर दिया। उन्हें संकीर्ण मानसिकता का बताना शुरु कर दिया। उसने ये भी कहना शुरु कर दिया कि दहेज लोभियों को लड़की देंगे मगर सच बोलने वालों को नहीं। तभी तो समाज की लड़कियाँ भागकर दूसरे समाज, धर्म के लोगों से विवाह कर लेती है। फिर कहां जाती है ? इज्जत, मान-सम्मान। लानत है ऐसे समाज पर

- देवेन्द्र कुमार मिश्रा

आरोग्य जगत्

होमियोपैथी से पथरी का सफल उपचार

- डॉ. विद्याकान्त त्रिवेदी
(होमियोपैथिक चिकित्सक)
मोबा. : ९८२६५११९८३, ९४२५५१५३३६

किडनी, यूरेटर या ब्लाडर में पथरी का निर्माण होना एक भयंकर पीड़ादायक रोग है। मूत्र में पाये जाने वाले रासायनिक पदार्थों से मूत्र अंगों में पथरी बनती है। पथरी दो प्रकार की होती है। **१. मूत्र पथरी (किडनी स्टोन) २. पित्त पथरी (गाल स्टोन)**

१. गुर्दे की पथरी :- अंग्रेजी में इसे किडनी स्टोन कहते हैं। मूत्र तंत्र की एक ऐसी स्थिति है जिसमें किडनी के अन्दर छोटे-छोटे पत्थर जैसे कठोर वस्तुओं का निर्माण होता है। बच्चों और वृद्धों में मूत्राशय की पथरी ज्यादा बनती है।

लक्षण : पीठ के निचले हिस्से अथवा पेट के निचले भाग में अचानक तेज दर्द, जो पेट व जांघ के संधि क्षेत्र तक जाता है। दर्द फैल सकता है या बाजु, गुप्तांगों तक बढ़ सकता है, यह दर्द कुछ देर तक बना रहता है। दर्द के साथ जी मचलने तथा उल्टी होने की शिकायत भी हो सकती है। यदि मूत्र संबंधी प्रणाली के किसी भी भाग में संक्रमण है, तो उसके लक्षणों में बुखार, कंपकपी, पसीना आना, पेशाब के साथ-साथ दर्द होना आदि, बार-बार और एकदम से पेशाब आना, रुक-रुक कर पेशाब आना, मूत्र में रक्त भी आ सकता है, अण्डकोष में दर्द, पेशाब का रंग असामान्य होना, मूत्रवाहक नली की पथरी में दर्द पीठ के निचले हिस्से से उठकर जांघों की ओर जाता है।

प्रमुख औषधियाँ – लाइको पोडियम, डायस्कोरिया, कैल्केरिया कार्ब, बरबेरिस, ओसेमिम कैनम, सार्सापरिला, सोलिडैंगो, टेरीबिन्थना, कैन्थरिस आदि।

पित्त पथरी (गाल स्टोन) :- पित्त कोष में पित्त रस जम जाने से पित्त पथरी बनती है। जब तक यह पित्त कोष में पड़ी रहती है तब तक दर्द नहीं करती। जब वहां से हिलकर पित्त नली में आ फंसती है तब दर्द हो जाता है। पित्ताशय दाहिनी तरफ होने के कारण दर्द वाहिनी कोष से उठकर चारों तरफ फैल जाता है। दर्द भयंकर पीड़ायुक्त होता है। पथरी बनने के कारकों का अभी तक पता नहीं चला है, लेकिन माना जाता है कि यह मोटापे, डायबिटीज, आनुवांशिक तथा रक्त संबंधी बीमारियों की वजह से हो सकती है। गाल स्टोन एक बहुत ही आम समस्या है। महिलाों में अधिक पायी जाती है।

पित्त पथरिया :- एक से लेकर सैकड़ों की संख्या में हो सकते हैं। छोटी या बड़ी साइज में पायी जाती है। पित्त की थैली में बार-बार सूजन आने के कारण बनती है।

लक्षण :- पित्ताशय की पथरी को साइलेंट स्टोन कहते हैं। पथरी का आकार बढ़ जाने पर पेट के ऊपरी दाहिने भाग में अत्यधिक दर्द होता है, जिसके बाद प्रायः मिचली और उल्टी होती है, गैस का बनना, पेट का फूलना, डकार आना, अपच, सह प्रक्रिया घंटों बनी रहती है, रोगी बैचेन, मूर्छित सा हो जाता है आदि लक्षण होते हैं।

प्रमुख औषधियाँ – कैलकेरिया कार्ब., बरबेरिस बलगेरिस, कालैस्टीन, चायना, कार्बोवेज, हाइड्रेस्टिस, कल्केफ्लोर, आर्सेनिक आदि।

उपचार – पथरी के कई रोगी मेरे उपचार से ठीक हो गये हैं। कई रोगियों का उपचार चल रहा है। लगभग तीस (३०) वर्षों तक होमियोपैथी पद्धति से उपचार करने के दौरान मुझे आम आदमी के रोगों और परेशानियों का व्यापक अनुभव हुआ। रोगी को काफी धन खर्च करने के बाद भी अन्य चिकित्सा प्रणालियों से संतोषजनक लाभ नहीं मिल पा रहा था इससे उन्हें अत्यधिक निराशा होती थी। और मेरे भी चिन्ता का कारण बना। कई रोगियों को जिन्हें असाध्य घोषित किया जा चुका था जीवन और मरण से जूझ रहे थे। महात्मा हैनिमेन और उनकी होमियो चिकित्सा प्रणाली की बदौलत कई असाध्य रोगियों को मेरे उपचार से संतुष्टि और सफलता प्राप्त हुई है। कई रोगियों को नया जीवन मिला।

परहेज – पथ्य :- करेला बिना बीच का, नारियल पानी, केला, गाजर का सेवन कर पथरी से बचा जा सकता है। इसके अलावा प्रतिदिन तीन से चार लीटर पानी पीना चाहिए।

अपथ्य :- टमाटर, बैगन, आंवला, चीकू, काजू, खीरा, मूंगफली, मेथी, चाय, बथुआ, पालक, फूलगोभी, कद्दू अधिक प्रोटीनयुक्त आहार, मसाले वाली चीजें, चाकलेट, मछली और मांसाहार से बचना चाहिए।

समाचार प्रवाह

आर्यवन रोजड़ गुजरात में दि. १० से १७ अप्रैल २०१६ तक

क्रियात्मक योग प्रशिक्षण शिविर सम्पन्न

रोजड़ (गुजरात)। पूज्य स्वामी सत्यपति जी महाराज के द्वारा संचालित आर्यों के प्रसिद्ध तीर्थ आर्यवन रोजड़ (गुजरात) में क्रियात्मक योग प्रशिक्षण शिविर का आयोजन दिनांक १० अप्रैल से १७ अप्रैल २०१६ को आयोजित की गई, जिसमें भाग लेने के लिए छत्तीसगढ़ से सभा प्रधान अंशुदेव आर्य के नेतृत्व में ४४ शिविरार्थी उपस्थित रहे। विशेष- सभा से सम्बद्ध आर्यसमाजों के प्रतिनिधिगण शिविर में पहुंचे थे। उक्त शिविर में छत्तीसगढ़ १२ प्रान्तों के शिविरार्थियों सहित लगभग ३०० शिविरार्थी लाभान्वित हुये। इस शिविर में स्वामी सत्यपति परिव्राजक, आचार्य ज्ञानेश्वर, आचार्य सोमदेव, आचार्य संदीप, ब्र. अरुण कुमार जी आर्यवीर, श्री चन्द्रेश जी आर्य, डॉ. सद्गुणा जी आर्या, सुश्री भावना जी आदि लब्ध प्रतिष्ठित वैदिक विद्वानों एवं योग मर्मज्ञों द्वारा प्रशिक्षण प्रदान की गई। शिविर में पहुंचे शिविरार्थियों के नाम इस प्रकार है :- सर्वश्री लेखनकार आर्य (रजपूरी), मोहनसिंह सरपंज (रजपुरी), बालेराम आर्य (खरकट्टा), श्री रवि आर्य (पालीडीह), कीरितराम आर्य (झक्कड़पुर), मोहन आर्य (पंगसुवा), डिग्रीलाल आर्य (ढाप), गुणनिधि आर्य (मुड़ागांव), गोवर्धन मालाकार (मुड़ागांव), महेश्वर आर्य (केंदाटिकरा), राजेश विश्वाल (कुंजारा), जनकराम (केंन्सरा), प्रफुल्ल आर्य (केंन्सरा), बुद्धदेव आर्य (नवापारा अ), नरसिंग आर्य (नवापारा अ), भास्कर आर्य (केराबहार), जदुमणी आर्य (बरखोरिया), सभा कोषाध्यक्ष जोगीराम आर्य (सलखिया), त्रिनाथराम आर्य (सलखिया), सहदेव प्रसाद (घटगांव), वृन्दासेवक (बिजना), शम्भुनाथ (सुकुलभटली), वानप्रस्थीगण में - धनसिंह आर्य, शोभनाथ, कार्तिक, डिलेश्वर, चिंतामणी, पुरणोराम आर्य, महीपत आर्य, हेमसागर, धनेश्वर आर्य (कटंगडीह), भुवनराम आर्य (पोतरा), सुखीराम साहू (कांसा), श्रीमती गीता आर्या (बाल्कोनगर), ताराचंद आर्य (बड़ेपंधी), चित्रसेन नायक (बड़ेपंधी), विरंची बगर्ती (पोड़ागढ़), रामअवतार आर्य (पौंड़ी), सुरेश (कवर्धा), राजकुमार वर्मा (कवर्धा), राजकुमार वर्मा (लेंजाखार), बसंत कुमार (बिलासपुर), श्रीमती राजेश्वरी पटेल (बिलासपुर), कलीराम साहू (दर्रा), किसुनराम साहू (दर्रा)।

- निज संवाददाता

५१ कुण्डीय महायज्ञ धूमधाम से सम्पन्न

दिल्ली। आर्य कन्या विद्यालय समिति अलवर के तत्वावधान में महर्षि दयानन्द सरस्वती के १९२वें जन्मोत्सव के अवसर पर अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के वैदिक विद्वान् आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री के ब्रह्मत्व में वैदिक विद्या भवन के विशाल प्रांगण में ५१ कुण्डीय महायज्ञ का भव्य आयोजन किया गया।

यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री जी ने विशाल जनसमूह को संबोधित करते हुये कहा कि यज्ञ से पर्यावरण शुद्ध, पुष्ट एवं सुगंधित होता है। यज्ञ से वैरभाव की प्रवृत्ति नष्ट एवं मित्रभाव की प्रवृत्ति पैदा हो जाती है। यज्ञ मानव को दानशील बनाता है तथा इससे मनुष्य सर्वहित में अपना हित समझने लगता है। वेद प्रवक्ता आचार्य जी ने स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के जन्मोत्सव की बधाई देते हुए कहा कि समग्र क्रान्ति के अग्रदूत स्वामी दयानन्द सरस्वती विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न, आदित्य ब्रह्मचारी, महान योगी, सन्त हृदय, दया, करुणा, परोपकार, सरलता, सहष्णिुता आदि के धनी युगप्रवर्तक महापुरुष थे। पूरे विश्व को आवश्यकता है ऋषि के संदेश की।

यज्ञ स्थल पर मुख्य अतिथि श्री कैलाशचन्द्र विश्नोई, पुलिस अधीक्षक अलवर ने ओ३म् का ध्वज फहराकर यज्ञ प्रारम्भ किया। विद्यालय समिति के प्रधान श्री जगदीश प्रसाद गुप्ता, मंत्री श्री प्रदीप कुमार आर्य एवं निदेशक श्रीमती कमला शर्मा ने सभी का आभार प्रकट किया। शांतिपाठ के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ। कार्यक्रम के अन्त में विशाल ऋषिलंगर का आयोजन किया गया।

संवाददाता : सूर्यकांत मिश्र,

१ १ ० जोड़ों का वैदिक रीति से विवाह सम्पन्न

कमलपुर सिलफिली (सूरजपुर)। दिनांक २३ अप्रैल २०१६ दिन शनिवार को सायंकाल ५ बजे से रात्रि ८.३० बजे तक हाईस्कूल मैदान कमलपुर सिलफिली जिला सूरजपुर में कलेक्टर सूरजपुर माननीय श्री सुरेन्द्र सिंह के मुख्य आतिथ्य में कुल ११० जोड़ों का वैदिक रीति से विवाह सम्पन्न हुआ, जिसमें हिन्दू धर्म के विभिन्न जातियों के अलावा ईसाई मत के ४ जोड़े भी थे। कार्यक्रम के आयोजक सर्व समाज सामूहिक विवाह ग्राम पंचायत सिलफिली विकासखंड व जिला सूरजपुर थे। वैदिक विवाह के सम्पन्न कराने वाले मुख्य पुरोहित आचार्य अंशुदेव आर्य प्रधान छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा सहित श्री मुकेश शास्त्री डी.ए.वी. विश्रामपुर, श्री ओमप्रकाश शास्त्री अम्बिकापुर, श्री संजय शास्त्री टाटीबन्ध रायपुर आदि पुरोहित वर्ग उपस्थित रहे। कार्यक्रम का संचालन श्री मुकेश शास्त्री कर रहे थे।

मुख्य रुप से उपस्थिति रहे - श्रीमती किरण सिंह केराम (जिला पंचायत सदस्य), श्री दयाराम वर्मा (सभा उपप्रधान एवं प्रधान आर्यसमाज बैजनाथपारा रायपुर), श्री दीनानाथ वर्मा सभा मंत्री, श्री धरनीधर आर्य पार्वतीपुर, श्री राजन मोहन उपप्रधान आर्यसमाज बैजनाथपारा रायपुर, श्री भुवनेश्वर प्रसाद शर्मा प्रबंधक आर्यसमाज बैजनाथपारा रायपुर, श्री गोकुल आर्य टाटीबन्ध रायपुर, श्री मोहन कुमार शास्त्री सलखिया, श्री संजयसिंह नेटी (सरपंज ग्राम पंचायत सिलफिली), श्री गोपाल विश्वकर्मा मंत्री आर्यसमाज मनेन्द्रगढ़, सर्वश्री दशरथ सिंह, शिवसिंह, अर्जुन कुशवाहा, जवाहर राम कुशवाहा सिलफिली, बाबूलाल अग्रवाल प्रदेश उपाध्यक्ष छ.ग. चेम्बर ऑफ कामर्स, श्री गिरीश गुप्ता उपाध्यक्ष जिला पंचायत सूरजपुर, वोगर साय ग्राम परसापारा, फिरोजखान सलका अधीना, रामचन्द्रयादव गणेशपुर, रमेश विश्वास कमलपुर, विनय बछार उपसरपंच कमलपुर, पतराम सिंह परसापारा, मटुकधारी कुशवाहा सिलफिली, हीरामणि, श्रीमती प्रभावती, श्रीमती लक्ष्मी देवांगन, दीपा कुशवाहा, गौतम प्रधान, ननकीसिंह, निरंजन मंडल, पूर्णोदय कुशवाहा, गौरांग मण्डल जिला अध्यक्ष छ.ग. बंग समाज, विजय शर्मा आर्य, श्री कृष्णचंद्र तिवारी आर्य मास्टर ट्रेनर, अलखराम पांडे, ढोलाराम विश्वकर्मा, अमरनाथ सिंह, पंचमसिंह, रामगोपाल विश्वकर्मा आर्य आदि गणमान्य नागरिक उपस्थित रहे।

इस अवसर पर सभी जोड़ों व गणमान्य नागरिकों को आर्यसमाज बैजनाथपारा रायपुर की ओर से २०० सत्यार्थ प्रकाश, सत्संग गुटका एवं कई प्रकार के ट्रेक्ट प्रदान किया गया। सभा की ओर से कलेण्डर व अग्निदूत मासिक पत्रिका भेंट की गई।

विवाहोपरान्त बालोद से "दवना" द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रम की छटा बिखेरी गई, जिसमें छत्तीसगढ़ी गीत, लोकगीत आदि का रंगारंग प्रस्तुतिकरण किया गया। कार्यक्रम में हजारों की संख्या में नागरिकगण उपस्थित रहे।

कार्यक्रम से लौटकर- दीनानाथ वर्मा सभा मंत्री

महर्षि दयानन्द आर्य उ. मा. विद्यालय टाटीबन्ध में

प्रवेश प्रारंभ

छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा संचालित एवं छ.ग. शासन शिक्षा विभाग से मान्यता प्राप्त महर्षि दयानन्द आर्य उ. मा. विद्यालय टाटीबन्ध रायपुर में सत्र २०१६-१७ के लिए कक्षा पहली से कक्षा बारहवीं तक (गणित, जीव विज्ञान, कॉमर्स, कला) हिन्दी माध्यम एवं अंग्रेजी माध्यम के लिए कक्षा नर्सरी, पी.पी.-१, पी.पी.-२ व कक्षा एसटीडी-१ से एसटीडी-७ तक के लिए प्रवेश आरम्भ हो चुका है।

हमारा संकल्प : शिक्षा के साथ-साथ वैदिक हवन, संस्कार योग

संपर्क करें : कार्यालय : ०७७१-२५७२०१३,

प्राचार्य : ९१७९५०९०३०

विशेष : विद्यालय पहुंच हेतु पूर्व प्राथमिक व प्राथमिक छात्र-छात्रा के लिए यातायात व्यवस्था

सभा कार्यालय दुर्ग में नवसंवत्सर २०७३ व रामनवमीं पर्व सम्पन्न

दुर्ग। छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय दयानन्द परिसर, आर्यगर, दुर्ग में चैत्र प्रतिपदा नवसंवत्सर २०७३ दिनांक ८ अप्रैल २०१६ व १५ अप्रैल २०१६ को रामनवमीं का पर्व सोल्लास सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर वैदिक यज्ञ, हवन व सत्संग का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ, जिसमें सभा कार्यालय मंत्री श्री दिलीप आर्य, उपमंत्री श्री चतुर्भुज कुमार आर्य, वरिष्ठ प्रबंधक श्री रामेश्वर प्रसाद यादव, घनुराम आर्य, श्रीनारायण कौशिक, रामाधार, अनिल आर्य, यशु वर्मा सहित अन्य नागरिकगण उपस्थित रहे।

वैदिक परिवार शिविर २० से २२ मई १६

श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास, उदयपुर के तत्वावधान में वैदिक परिवार शिविर का आयोजन २० से २२ मई तक प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् डॉ. सोमदेव शास्त्री के निर्देशन में किया जा रहा है। इस अवसर पर विशेष प्रशिक्षण देने के लिए स्वामी सुधानन्द जी, योग गुरु उमाशंकर शास्त्री, प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री केशव देव शर्मा उपस्थित रहेंगे। अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें: **नारायण मित्तल संयोजक, मोबा. नं. ९४१४१६९४४०**

गुरुकुल संस्कृत महाविद्यालय शुक्रताल, मुजफ्फरनगर उत्तरप्रदेश में प्रवेश प्रारम्भ

गुरुकुल महाविद्यालय गंगा के पावन तट पर ऋषि महर्षियों की तपस्थली, प्रकृति के सुरम्य वातावरण में स्थित है। यहां संस्कृत भाषा के साथ-साथ आधुनिक विषयों जैसे अंग्रेजी, गणित, इतिहास, भूगोल एवं अर्थशास्त्र आदि विषयों का अध्यापन सुयोग्य अध्यापकों के द्वारा कराया जाता है। कम्प्यूटर शिक्षा का उत्तम ज्ञान कराया जाता है। नये सत्र के प्रवेश १ अप्रेल १६ से प्रारंभ हो रहे हैं। कृपया अपने होनहार बच्चों को संस्कार युक्त शिक्षा दिलाने हेतु दूरभाष पर भी वार्ता करके प्रवेश दिलाये। विद्यालय में २ रसोईया, एक वार्डन (संरक्षक) एक क्लर्क तथा संस्कृत संस्थान के मानदेय पर तीन संस्कृत अध्यापक व दो आधुनिक विषय के अध्यापकों की आवश्यकता है।

संपर्क सूत्र : ९४१२५९५५४२

अग्निदूत के ग्राहक सदस्यों की सेवा में

छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के मासिक मुख पत्र 'अग्निदूत' के समस्त ग्राहक सदस्यों से निवेदन है कि अपना वार्षिक शुल्क १००/- यथाशीघ्र सभा कार्यालय को भेज दें, जिससे कि उन्हें नियमित रूप से 'अग्निदूत' भेजा जाता रहे। जिन सदस्यों के शुल्क तीन वर्षों से अधिक बकाया हो, उनसे निवेदन है कि वे अपना दसवर्षीय शुल्क ८००/- रु. भेजें। इस कार्य को यथाशीघ्र प्राथमिकता से करें। अन्यथा **इस मास से अग्निदूत भेजना बंद कर दिया जायेगा।** पत्र व्यवहार में अपना सदस्य संख्या तथा पूरा पता पिन कोड सहित अवश्य लिखें। **सभा का भारतीय स्टेट बैंक दुर्ग शाखा में सेविंग एकाऊन्ट नं. : 32914130515 है, जिसमें आप किसी भी भारतीय स्टेट बैंक की शाखा से आनलाईन शुल्क जमा कर सभा कार्यालय के दूरभाष नं. ०७८८-२३२२२२५ द्वारा सूचित करते हुए अलग से पत्र लिखकर अवगत कर सकते हैं। अग्निदूत मासिक पत्रिका के सम्बन्ध में कोई भी शिकायत हो तो कृपया श्रीनारायण कौशिक को चलभाष नं. ९७७०३६८६१३ में सम्पर्क कर सकते हैं।**

- दीनानाथ वर्मा, मंत्री मो. ९८२६३६३५७८

कार्यालय पता : 'अग्निदूत', दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग (छ.ग.)491001, फोन : ०७८८-२३२२२२५

जलता हुआ अंगारा है.

आर्यसमाज इस भूमण्डल पर जलता हुआ अंगारा है ।
आर्यवीरों ने इसके खातिर, अपना जीवन वारा है ॥

विश्व क्षितिज पर रहा चमकता वीरों के बलिदान से ।
सत्य डगर पर बढ़ा निरंतर, लड़ा सदा अज्ञान से ॥
इसके आने से देश–धर्म का चमका पुनः सितारा है ।
आर्यसमाज इस भूमण्डल पर जलता हुआ अंगारा है ॥

भ्रम का भूत भगाने वाला, पापों का गढ़ ढाने वाला ।
वेदों के सद्ज्ञान के द्वारा, फैलाता मन में उजियाला ॥
पाखण्ड, अविद्या, गुरुडम रुपी नागों को ललकारा है ।
आर्यसमाज इस भूमण्डल पर जलता हुआ अंगारा है ॥

मजबूत कवच हिन्दू जाति का रक्षक पोषक कहलाया ।
वैदिक धर्म का विघटन रोका, आर्यों ने सम्बल पाया ॥
कृण्वन्तोविश्वमार्यम् का फिर गगन में गूंजा नारा है ।
आर्यसमाज इस भूमण्डल पर जलता हुआ अंगारा है ॥

आडम्बर और कुरीतियों पर करता है व्यापक संधान ।
इस भट्टी में तप जाने पर कुन्दन बन जाता इंसान ॥
अमर हो गया संजय जग में, जिसने इसे स्वीकारा है ।
आर्यसमाज इस भूमण्डल पर जलता हुआ अंगारा है ॥

आर्य बनें शुभ कार्य करें, ऋषिवर ने हमें पुकारा है ।
लाला लाजपत, हंसराज जी, लेखराम सरदारा है ॥
गुरुदत्त विद्यार्थी, श्रद्धानन्द ने, इसको खूब संवारा है ।
आर्यसमाज इस भूमण्डल पर जलता हुआ अंगारा है ॥

* आर्यकवि संजय सत्यार्थी *
आर्य सदन, पो.– नेमदार गंज, जिला–नवादा ८०५१२१ (बिहार)

मई 2016

डाक पंजी. छ.ग./ दुर्ग संभाग / 99 / 2015-17

CHH-HIN/2006/17407

प्रेषक :

अग्निदूत, हिन्दी मासिक पत्रिका

कार्यालय, छ.ग.प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर,

आर्यनगर, दुर्ग –491001 (छ.ग.)

(छपी सामग्री प्रिन्टेड बुक)

सेवा में,

श्रीमान्

क्र. 2

दिल्ली–

वानप्रस्थ साधक आश्रम, रोजड़, गुजरात में पूज्य स्वामी सत्यपति जी की अध्यक्षता में क्रियात्मक योग प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। जिसमें भारतभर के 12 प्रान्तों से लगभग 260 शिविरार्थियोंने भाग लिया। इस शिविर का समापन दिनांक 17 अप्रैल 2016 को हुआ।

सम्पादक प्रकाशक मुद्रक आचार्य अंशुदेव आर्य द्वारा छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग के वैदिक मुद्रणालय से छपवाकर प्रकाशित किया गया।